तृतीय अध्याय

राही मासूम रज़ा के

उपन्यासों का आलोचनात्मक

अध्ययन

:- तृतीय अध्याय -:

राही मासूम रजा के उपन्यासोंका आलोचनात्मक अध्ययन ---

(अ) आधा गाँव --

डॉ. राही मासूम रजा का बहुचर्चित और पहला हिन्दी उपन्यास सन १९६६ में प्रकाशित हुआ । इस उपन्यास को लेकर हिन्दी जगतमें काफी चर्चा हुई । यह चर्चा साहित्यिक एवं कलात्मक कम और साहित्य बाह्य-ही अधिक रही । इस उपन्यास के आलोचकोंने इसमें प्रयुक्त भाषापर, गालियोंपर और यौन सम्बन्धों के वर्णनोंको लेकर ही लेखक की अधिक आलोचना की । इसके विपरीत इसकी प्रशंसा भी कम नहीं हुई । कई आलोचकोंने इसे इस दौरका महान उपन्यास करार दिया । कईयोंने इसे आंचलिक उपन्यासोंकी श्रेणीमें रखकर इसे एक उत्कृष्ट आंचलिक उपन्यास कहा । " किसी महान कृति और सुन्दर कृतिमें वही अन्तर होता है जो किसी महान व्यक्ति और सुन्दर व्यक्तिमें होता है । आवश्यक नहीं कि जो महान हो वह सुन्दरभी हो । महान कृतिके अस्तित्व के कई स्तर होते है । इसके लिए गहनता, जटिलता, तनाव, आयामोंका वैविध्य, परिप्रेक्ष्य के विस्तार तथा अनुभवों की प्रामाणिकता की आवश्यकता होती है । इन सभी दृष्टियों से देखनेपर " आधा गाँव " एक असाधारण और कुछ सीमातक महान उपन्यास सिद्ध होता है ।"[1] भोजपुरी भाषा और उससे सम्बन्ध वातावरण द्वारा आंचलिकता में अभिवृद्धि हो गई है । इस प्रकार यह एक बोधक आंचलिक उपन्यासोंमें विशिष्ट स्थान का अधिकारी है ।"[2] आलोचकों के इन मतमतांतरों

---

१ समय की सलवटें और आधा गाँव - डॉ. भगवान सिंह, पृ.सं.१९३ ।
आलोचना (त्रैमासिक) जुलाई-सितम्बर १९६७ ।

२ स्वातंत्र्योत्तर आंचलिक उपन्यास - डॉ. ज्ञानशिला शर्मा, पृ.सं. ३४ ।

के बीच इस रचनाके उद्देश्य और इन दोनों दृष्टियोंसे संतुलित विश्लेषण की आवश्यकता है ।

राही की यह रचना गाजीपुर जिले के गंगौली नामके एक छोटेसे गाँव की कहानी है । लेकिन यह कहानी भी पूरे गाँव की न होकर गंगौली के आधे गाँव की ही, इतनाही नहीं गंगौली में बसे कुछ सैयद घरानों की ही है । राहीने इस सीमा संकोच का कारण भी बताया है ।" मैंने पूरे गाँव को नहीं चुना, बल्कि केवल गाँव के उस टुकड़े को चुना, जिसे मैं अच्छी तरह जानता हूँ । कथाकार के लिए यह जरूरी है कि वह उन लोगोंको अच्छीतरह जानता हो, जिनकी कहानी वह सुना रहा है ।"[१] किसी भी साहित्यकारके लिए यह बात आवश्यक भी है । राहीने जो आधे गाँवकी कहानी कही है, वह बहु आयामी और वैविध्य लिए हुये है, जिसके कारण उसकी कहानी केवल एक गाँवकी न रहकर गंगौली जैसे हजारों हिन्दुस्तानी गाँवोंकी हो गई है । वह समयकी कहानी बन गई है । स्वयं लेखक के शब्दोंमें -- " यह कहानी न कुछ लोगोंकी है और न कुछ परिवारोंकी यह उस गाँव की भी कहानी नहीं है, जिसमें इस कहानी के भले बुरे पात्र अपने आपको पूर्ण बनानेका प्रयत्न कर रहे हैं । यह कहानी न धार्मिक है, न राजनीतिक, क्योंकि समय न धार्मिक होता है न राजनीतिक --- और यह कहानी है समयही की ।"--[२] लेखक का विश्वास गलत भी नहीं है । राही की यह कहानी समय की रहते हुये भी इसमें कई रेखाएँ उभरकर आई हैं । इस कहानीमें वह एक रेखा है, जिसने हिन्दू- और मुसलमानोंको अधिक हिन्दू और अधिक मुसलमान बनाया । यह कहानी टूटते मान्यों मूल्योंकी है, यह कहानी देशविभाजन की है, यह कहानी गंगौली में बसे हुये शिया मुसलमानोंकी धार्मिक रूढ़ियों और विश्वासोंकी है, परम्परावादी समाज का स्थान लेनेवाले नये सामाजिक तत्वोंकी है । इस दृष्टिसे यह पूरे देश की कहानी बनती है । लेखकने इन अनेक रेखाओंका तानाबाना बुनकर एक सुन्दर वस्त्र तैयार किया है ।

---

१. आधा गाँव - ले. राही मासूम रजा - पृ. सं. २०१ ।

२. आधा गाँव - ले. राही मासूम रजा - पृ. सं. ११ ।

कथानक --

राही को अपने गंगौली और उसके लोगोंसे बेहदप्यार है। उन्हें वहाँ के लोगोंके सुख-दुःख में खुशहाली और फिक्र में, परस्पर संबंधोंके भावुकता पूर्ण ताने बाने में अधिक रुचि है। इसलिए राहीने सैयद परिवारोंके और वहाँ के जुलाहों, चमारों के परिवारों के लगभग सभी सदस्योंको अपनी रचनामें स्थान दिया है।

वहाँ के सभी लोगोंके स्वभावका उनके दुखदर्दका जमकर वर्णन किया है। यह सारा वर्णन मोहर्रम के दिनोंके सन्दर्भ में है। लेखक स्वयं सपरिवार उपन्यासमें उपस्थित हुआ है। उसने कहानी अपने बचपन से आरंभ की है। बचपन में जो बाते समझमें नहीं आती और जिन्हें वह आज कुछ समझता है, विस्तारसे चित्रित की है। इस प्रकार का वर्णन करनेमें किसी प्रकारका संकोच और लागलपेट दिखाई नहीं देती। अपने नाते - रिश्तों के परिचयात्मक विवरणोंके बाद उनके अच्छे बुरे क्रिया व्यापारोंको बड़ी निःसंकोचसे और मनोपी दृष्टिसे चित्रित किया है।

मोहर्रम का त्यौहार शुशियोंका नहीं मातम मनानेका होता है। गंगौलीमें इस त्यौहारका बड़ा महत्व है। सभीपर इस त्यौहार का बड़ा प्रभाव है। "सच तो यह है कि उन दिनों सारा साल मोहर्रम के इंतजारमें ही कट जाता था। ईद की खुशी अपनी जगह, मगर मोहर्रम की खुशी भी कुछ कम नहीं हुआ करती थी। बकरीद के बादसेही मोहर्रम की तैयारी शुरू हो जाती है।"[1] गंगौलीमें रहनेवाले उत्तर और दक्षिण पट्टीके मुसलमान घरोंमें भारी हलचल पैदा होती। सारे लोग बड़े, बच्चे, जवान स्त्रियाँ मोहर्रम की तैयारी में लग जाते थे। मोहर्रम के दस दिनोंमें रोज चार मजलिसें होती रहतीं और उनमें मरसिए और नौहे गाये जाते, मातम किया जाता। उत्तर और दक्खिन पट्टीके लोगोंमें मातम करने के लिए स्पर्धा शुरू होती। बेहोश होने का अभ्यास शुरू हो जाता। गंगौली की मजलिस में शामिल होने के लिए बाहर गये लोग वापस गंगौली आते। इतनाही नहीं गाजीपुर और लखनऊ से भी लोग मजलिस में शामिल होने के लिए आते और मिन्नते मांगते

---

१. आधा गाँव - ले.राही मासूम रजा - पृ.सं.१८।

रहते । ताजियोंको सजाधजाकर निकाला जाता । इसमें हिन्दू और मुसलमान दोनों शामिल होते । इसका उदाहरण गाँवकी वह ब्राह्मणी जो हम्माद मियाँसे अपने दरवाजेपर ताजियाँ गिराने के लिए प्रार्थना करती है । वह अपने बेटेको रुजा का कारण इमाम की नाराजगी मानती है । गाँव में विशेषतः उत्तर और दक्खिन पट्टी के लोगों में इन ताजियों को लेकर बड़ी स्पर्धा है । कभी मनमुटाव होता, कभी मारपीट और कभी लट्ठ बाजीसे भी काम लिया जाता । ऐसे झगड़ोंमें कई बार लोगोंके सर फूटते, पुलिसमें एक दूसरे के विरोध में शिकायत दर्ज की जाती और पुलिस-थाना अमलदार दोनों लोगोंसे पैसे ऐंठते रहता । लेखक ने इन पर्व त्यौहारोंका वर्णन खूब आत्मीयतासे किया है । उपन्यासमें इसका वर्णन कई बार आया है । ऐसे उत्सवोंमें भी छोटे बड़े का ध्यान रखा जाता है । मजलिस के मिंबरपर बैठनेवाले अपने को पाकहड्डोका कहलाते और अपनी जगहपर किसी दूसरेका बैठना सहन नहीं करते थे । वस्तुतः इन मजलिसों में नौहे गाना, रोना धोना अतिशय कृत्रिम, उबाऊ और नीरस लगता है । राहीने परम्परा से दबेहुये इन लोगोंकी असंगतियोंका वर्णन यथार्थ और व्यंग्यपूर्ण शैलीमें किया है । आजादी के बाद मोहर्रम की मजलिसोंके रंगमें सराबोर होनेवाला यह गाँव एकदम वीरान हो जाता है । जमींदारी नष्ट हो जाती है, कई लोग अपने बीवी बच्चोंका भार बूढ़ोंपर डालकर पाकिस्तान चले जाते हैं । खाने की लाल्ले पड़ जाती है, ताजियों पर नया कागज चढ़ाना भी मुश्किल हो जाता है । स्य सहन के लिए यह सोचना स्वाभाविक है कि " वह गंगौलीकी आजादी पर खुश हो या गमगीन । वह पंचायत की लगी रोशनीसे या सैयद बाड़े के अँधेरे से खौफ खाये ।"[1]

गंगौली के लोगोंके आपसी सम्बन्ध भी देखने लायक हैं । ये लोग सैयद के नामपर तो एक थे लेकिन पट्टीदारी और आपसी बैर भी कुछ कम नहीं था । फुन्ननमियाँ और हम्मादमियाँ का झगड़ा अंतक चलता रहा । हकीम साहब अंतक डॉक्टर कमालुद्दीन पर खौफ खाते रहे, क्यों कि उसके कारणही उनकी

---

१. आधा गाँव - ले.राही मासूम रजा - पृ.सं.४०१ ।

इकोगी ऊँच नहीं थी। गंगौली के सैयदों का खून तब तौलता जब जुलाहिने, कमारिने या हरामी संताने सैयदिनोंको ललकारतीं स्त्रियों में आपसी झगड़े तो हमेशा चलते रहते। मियाँ लोग जुलाहिनों और कमारिनोंसे सम्बन्ध रखनेमें बुरा नहीं मानते। " शायद ही मियाँ लोगोंका कोई ऐसा खानदान हो जिसमें कलमी लड़के लड़कियाँ नहीं। जिनके घरमें खानेकोभी न हो वे भी किसी न किसी तरह कलमी आमों और कलमी परिवारोंका शौक पूरा हो कर लेते हैं।"[1]
लेखकने मुस्लिम जिंदगीकी परम्परागत यौन संबंधी नैतिकता का भी सही चित्र प्रस्तुत किया है। उपन्यासमें ऐसे कई चेहरे हैं जो इस कथन की पुष्टि करते हैं। स्त्री पात्रों में मेहरुन्निया, सैफुनिया, रुकईद, गुलबहरी, कुलसुम, अलीनिया, गुलाबीजान, झंगटिया बो प्रमुख हैं, तो पुरुष पात्रोंमें मंजूरमियाँ, सुलेमान चाचा, हम्मादमियाँ, फुन्ननमियाँ, फुन्नन, कासू, मिग्दाद, कमालुद्दीन, हसन आदिके नाम लिये जा सकते हैं। ये लोग अपने अपने घरोंमें नीच जाति की स्त्रियाँ रखते हैं और ऊपरसे पाक खूनका दंभ पालते रहते हैं। इसीतरह इन दोनों पीढ़ियोंके घरोंमें ऐसी कई जवान लड़कियाँ हैं जो किसी न किसीसे फंसी हुई हैं। वह कभी चोरी छिपे तो कभी खुले में शारीरिक संबंध रखती है। अब्बूमियाँ की सईदा कई लोगोंके साथ फँसी हुई है, वन्नू अपने प्रथम मिलन में ही सलीमनी को फँसाता है। सितारा अपनेको अब्बास के हवाले कर देती है, कुलसुम को फुन्नन मियाँने भगाकर लाया है, गुलाबीजान ठाकुर हरनारायण सिंह की रखैल है, तो कुँवरपालसिंह और गुलबहरी के सम्बन्ध प्रसिद्ध हैं। इसके अतिरिक्त अफज़ल और कामिला, छुकरिया और मंगरिया, बचनिया और सिफारिया आदि अनेक ऐसे पात्र हैं जो एक दूसरेसे फँसे हुये हैं। इनमें मिग्दाद सैफुनिया के सम्बन्धोंका तो बहुत दुःखद अंत होता है। लेखकने इनके यौन सम्बन्धोंका बहुतही खुलकर वर्णन किया है। ऐसे वर्णन करनेमें लेखक की दृष्टि बहुतही रमी हुई है।

इन लोगों में अपनी पाक खूनका भी बहुत अभिमान है। हकीमसाहब

---

१. आधा गाँव - डॉ. राही मासूम रज़ा - पृ.सं.१८-१९।

निची नीच जातिके मरीजको देखने के बाद बारबार हाथ धोते हैं । मिगदाद सैफुन्नियासे शादी करता है तो बिरादरीसे निकाल दिया जाता है । फुन्नन मियाँ का भी यही हाल है । लेकिन अंतमें आते आते यह अभिमान टूटता दिखाई देता है । अब जमींदारीके चले जाने के साथ साथ पाक हड्डीवाले युवकोंकाभी अकाल पड़ गया । हुसेन अलीमियाँ किसी कलंकित परिवारसे रिश्ता जोड़नेमें हिचकिचाते हैं, तब फुन्नन मियाँ उसे समझाते हुये कहते हैं -- "पगला गये हो का ? ई सय्यदी बघारनेका जमाना है ? अरे मियाँ, ऊ दिन इज्जत आबरू से गुजर गये समझ लेव जानो ।"[1] ये सैयद परिवार आजादी के बाद वैसे टूट चुके हैं । उनका अहं जैसे चूर चूर हो गया है । हकीम साहब की हालत तो मत पूछिए । एक दिन पाखाने में गिर जाते हैं और वहाँ बेहोश हो जाते हैं । होश आनेपर देखते हैं कि हरामी डॉक्टर कमालुद्दीन उनका इलाज कर रहा है । उसे देखकर उनकी आत्मा कराह उठती है " हेल दियो, कम्बो, तूँ हम्में का हालात पर पहुँचा दियो ! सरकार हमारी जमींदारी ले लिहिस . . . . तूँ हमारे मरीज लेलियो .... सहम आखिर अब काहे को रहे "[2] -- अब सैयद जातेमें किसीको लड़कोंका किसी के साथ सम्बन्ध जोड़कर अफवाहें उड़ाने के लिए रुके हो नहीं रहे हैं । इसलिए औरतोंके हाथमें काम हो गये हैं । फुन्नूमियाँने जमींदारीका घमंड भूलकर जूतोंकी दुकान खोली है । कमालुद्दीन के दवाखानेमें दो-दो सैयद बेटे नौकर बन गये हैं । पाकहड्डी के अभिमानी अब्बूमियाँको फस्सू की दुकानसे जूते उधार लेने पड़ते हैं। कांग्रेस राज्यमें जगर परसराम को केवल वोटही नहीं देना पड़े, उसे सम्मान देकर उसके सामने झुकनाभी पड़ा । हकीमसाहब परसराम के कर्जदार बन गये और कर्ज वसूली के लिए सम्मन आया हुआ है । इस प्रकार " आधा गाँव " सैयद लोगोंके उत्थान-ह्रास और अवनति की कहानी है ।

पैंतीस-चालीस वर्ष पहलेका यह गंगौली गाँव वैसे बहुत पिछड़ा हुआ

---

१. आधा गाँव - ले.- राही मासूम रजा - पृ.सं.२५१ ।

२. आधा गाँव - ले.- राही मासूम रजा - पृ.सं.२६१ ।

दिखाई देता है । इसका प्रधान जमींदारी संस्कृतिका स्त्रियोंपर प्रभाव है । वह मियाँ के किसीभी कामसें दखल अंदाजी नहीं कर सकती । यहाँ के कई लोगोंने अभीतक रेल भी नहीं देखी है । हकीम साहब कैदों में पहले व्यक्ति थे जिन्होंने रेल देखकर, रेल खरीदनेका सपना देखा था । आम लड़कियोंको यह भी पता नहीं है कि सिनेमा क्या होता है और सिनेमा के चित्र चलते बोलते कैसे हैं । उनको यह भी भ्रम था कि हवाई जहाजमें बैठे हुये लोग पाखाने जानेवाली औरतोंको देखते हैं । लेखकने वहाँ के लोगोंका पिछड़ा पन और उससे उत्पन्न मानसिकताका अच्छा वर्णन किया है ।

भारत के अन्य गाँवोंकी तरहही गंगौली पुलिस की ज्यादतियों से पीड़ित है । गंगौली में सारे दिन झगड़े होते रहते हैं और थानेदार कासीमाबाद दोनोंसे पैसे ऐंठते रहता है । युद्ध के समय यहाँ के भी कुछ लोग सेनामें भर्ती हो गये थे, लेकिन उनमेंसे कुछही बच सके । गाँवमें हिन्दु-मुसलमानोंमें सौहार्द के सम्बन्ध थे । वे भलेही एक दूसरेका छुआ खाते पीते नहीं, लेकिन एक दूसरेको नफरत से नहीं देखते थे । गुलाबीजान हरनारायण सिंह की रखैल थी । एक ओर तो वह फुन्नन मियाँ को जेलमें बन्द करनेके लिए उमामसाहबसे मिन्नते माँगती तो दूसरी ओर थानेदार के साथ सोनेके बाद नहाकर अल्लाह मियाँ से माफी भी माँगती थी कि पेट की खातिर उसे एक काफिर के साथ सोना पड़ता है । सुलेमान की चमारिन झांगटिया जो किसी पत्नि से कम नहीं थी, परंतु तीन तीन बच्चों को जन्म देने के बाद भी दोनों खानेपीने की एक दूसरेकी चीजें छूते नहीं थे । सभी लोग एक दूसरे के धर्म का विचार रखते थे । हुसैन खाँ, हरनारायण प्रसाद सिंह को हिन्दु हलवाईसे मिठाई बनवाकर भेजता है । मियाँ लोग दशहरे के लिए चंदा देते थे । जहीर मियाँ ने हिन्दु मंदिरके लिए एक बाबाको पाँच बीघे जमीन की माफी दे दी थी ।

लेकिन जैसेही अलीगढ़से पाकिस्तानके नारे गंगौलीमें पहुँचने लगे, सारा वातावरणही गंदला हो गया । उपन्यासकारने पाकिस्तान के निर्माण के प्रश्न को

बहुत दूर तक गंगौली के आम आदमी को मानसिकता से जोड़कर सोचनेके लिए बाध्य किया है। यहाँ के मुसलमानों के ध्यान में यह नहीं आया कि अचानक मुसलमानों को एक अलग देश की जरूरत क्यों महसूस हो गई। फुन्नन मियाँ की यह समझमें नहीं आता कि बारहों बरसों के पहले हिन्दुओंको तकलीफ देनेवाले बादशाह की करतूत की सजा आजके मुसलमानों को क्यों? उनको यह भी समझके परे था कि गुनाह कलकत्ते के मुसलमान करें तो गाजीपुरके मुसलमानों को उसका दंड क्यों ? पाकिस्तान का जहर फैलाने के बावजूद गाजीपुरके मुसलमानों को बचानेके लिए ठाकुर जयपालसिंह तैयार हो जाते हैं और फुन्नन मियाँ बिरादरी से बाहर होने की सजा सहकर भी सैय्यदोंके विरोधमें ठाकुरोंका समर्थन करते हैं। ये सारे सम्बन्ध धीरे धीरे अपनी अपनी जगह बिखरते जाते हैं। पाकिस्तान के निर्माण को लेकर सभी के दिल व्यथित थे। सभी अपने अपने सन्दर्भों में उसे देखते हैं। सफ़ीरवा पाकिस्तान जानेमें तो मिगदाद भारतमें रहनेमें अपना हित समझता है। कम्मो और सईदा को यह चिन्ता है कि अलीगढ़ पाकिस्तान में जायेगा या भारत में रहेगा। हकीम साहब तो अपने परिवार के सम्बन्ध में ही उसे सोचते हैं और कहते हैं कि -- "ई बशीर। ई पाकिस्तान त हिन्दू - मुसलमानोंको अलग करे को बना रहा। बाकी हम त ई देख रहे की ई मियाँ - बीवी, बाप-बेटा और भाई-बहन को अलग कर रहा।"[1] बेटे कुद्दन के पाकिस्तान चले जाने से हुये दर्द का अनुभव एक तीखी वास्तविकता है। अब्बू मियाँ का ख्याल है कि पाकिस्तानके बननेसे तो जिन्ना साहब कोही फ़ायदा हुआ, और रब्बनजी तो उसके निर्माताओंको गालियाँ ही देती हैं। आम आदमीके समझमें तो यह पाकिस्तान कहाँ बननेवाला है इसका भी पता नहीं है। बहुतसारे अलीगढ़से आये हुये मौलवी और लोडरोंके भाषण देने के बाद पाकिस्तान निर्माण के अलग अलग लाभ समझाने के बाद भी यहाँ का आम आदमी अपना गंगौली छोड़कर जानेकी सोचही नहीं सकता। मियाँदाद का तो यहाँ तक ख्याल है कि "हम ना जाए वाले है कहीं। जावें ऊ लोग जिन्हें हल बैलसे शरम आती है। हम तो किसान हैं नन्हूभाई। यहाँ हमरा

---

१. आधा गाँव - ले. - डॉ. राही मासूम रजा - पृ.सं. १९७।

खेत, हमारी जमीन नहीं हम ।"[1] तन्नू पाकिस्तान का विरोध करता है लेकिन सईदाको न भुलपानेके कारण पाकिस्तान चला जाता है । अब्बास पहले तो पाकिस्तान का समर्थन करता है लेकिन वह भी पाकिस्तान नहीं जाता । फुन्नन मियाँ के दामाद बीवी बच्चोंका भार उनपर सौंपकर पाकिस्तान जाता है । आखिर अलीगढ़ वालोंके नारोंने काम किया और एक दिन पाकिस्तान बन गया । तन्नू ने अलीगढ़ वालोंसे कहा था " नफरत और डर की बुनियाद पर बननेवाली कोई चीज मुबारक नहीं हो सकती । पाकिस्तान बन जाने के बाद भी गंगौली यहीं हिन्दुस्तान में रहेगा और गंगौली फिर भी गंगौली है ।"[2] नफरत और डर की फसल आज भी भारतमें रहनेवालोंको काटनी पड़ रही है ।

भारतीय मुसलमानों की व्यथा को राहीने बड़े ही प्रभावपूर्ण और आत्मीय ढंगसे अंकित किया है । पाकिस्तान के विभाजन को लेकर निर्मित मुस्लिम मानसिकता का यह चित्रण बेजोड़ बन पड़ा है ।

लेखकने स्वतंत्रता के बाद के देहातोंका बदलता हुआ चित्र भी उपन्यासमें प्रस्तुत किया है । स्वतंत्रताके बाद जमींदारी गई और एक नया वर्ग गाँवमें पैदा हुआ । इस वर्ग की विशेषता यह है कि ये रात दिन षड्यंत्रोंमें लगे रहते हैं, गाँवमें दलबन्दी करते हैं, स्कूल कालिज जैसी संस्थाएँ निकालकर भ्रष्टाचार करते हैं । फुन्नन मियाँ जैसे लठबाज भी ऐसे लोगोंमें शामिल हैं, जो यह जरूरी समझते हैं कि आदमी के पीछे सौ-पचास लाठी रहना जरूरी है । लेखकने जमींदारों द्वारा परसराम चमार (एम.एल.ए.) को जेल भिजवाकर तथा फुन्नन मियाँ और छिकुरिया जैसे लड़ाकों की हत्या बताकर यह प्रमाणित किया है कि अभी गाँव का जमींदार मरा नहीं है । कथा का अंत इस तरह करने के पीछे लेखक का पारिवारिक जमींदारीपन जागृत हुआ दिखाई पड़ता है ।

---

१. आधा गाँव - ले.डा.राही मासूम रजा - पृ.सं.११६ ।

२. आधा गाँव - ले.डा. राही मासूम रजा - पृ.सं.२६१ ।

पात्र और चरित्र चित्रण --

राहीका यह उपन्यास पात्रोंकी भीड़ से खचाखच भरा हुआ है। इतनाही नहीं " "आधा गाँव " जिसने पात्रोंकी संख्या संबंधी सभी रिकार्डोंको तोड दिया है। यों तो पात्रोंकी अधिकता आँचलिक उपन्यासोंकी एक विशिष्टता ही है। लेकिन यह उपन्यास निश्चित रूपसे हिन्दी में सर्वाधिक पात्रोंवाला उपन्यास है।"[१] पात्रोंकी इस भीड़मेंसे कुछ विशिष्ट व्यक्तित्व लिए हुये पात्रोंको चुनना कैसे कठिन काम है, लेकिन हर कृतिमें कुछ ऐसे व्यक्तित्व होते हैं जो पाठकोंको अभिभूत करते है। और पाठकोंके हृदयपटलपर अपनी छाप छोड़कर अन्य पात्रोंसे अपना अलग अस्तित्व सिद्ध करते हैं। इस उपन्यास में भी फुन्ननमियाँ, मिगदाद, हकीमसाहब ऐसे पात्र है जो अपनी अलग विशेषता के कारण पात्रों के इस जमघट में भी सीनातानकर, गर्दन ऊंचीकर खड़े रहते हैं।

विशिष्ट पात्र --

१) फुन्नन मियाँ २) मिगदाद ३) हकीम साहब।

(१) फुन्नन मियाँ --

फुन्ननमियाँ का व्यक्तित्व गंगौली की मिट्टी और परिवेश का परिणाम है। फुन्ननमियाँ एक मामूली जमींदार थे। वे इतने मामूली जमींदार थे कि " पाजामा भी नहीं पहनतेथे, लुंगी बाँधतेथे - वह भी सिलीहुई लुंगी नहीं, बल्कि कसाईयोंकी तरह फेंटेदार लुंगी।"[२] कसाहुआ बलदंड शरीरथा और जमींदारी का कब्जा था। लेकिन जमींदारी उनकी शक्ति नहीं थी। उनकी शक्ति थी उनके दो ढाई सौ लठैत। वे मुसलमान रूढियों और परम्पराका तथा बिरादरी के रीतिरिवाजोंका आदर करते थे। परंतु उनका अहं इतना जागृत था

---

१. आंचलिक उपन्यास : सम्वेदना और शिल्प - ले.ज्ञान चंद गुप्त - पृ.सं.२५।
२. आधा गाँव - ले.राही मासूम रजा - पृ.सं.६५।

कि अपने मर्मस्थल को दंश करनेवाली किसीभी चीज को वे नहीं सह सकते थे। अपने अहं की तुष्टि के लिए अपने प्राणोंकी बाजी लगाने के लिए भी वे सदैव तैयार रहते थे। एक बार किसी चीज पर दिल बैठ गया तो उसे वे पूरा ही करते थे। एक दिन अपने पड़ोसी करामत अली खाँ की बीवी कुलसुम को उन्होंने देखा और उसके सौन्दर्यको देखकर उसपर न्यौछावर हो गये। एक दिन वे उसे जबरदस्ती उड़ाले आये, और जीवनभर उसका साथ निभाते रहे। गाँवके अन्य मियाँ लोग जुलाहिने और बघारिनोंसे उलझाते रहे लेकिन फुन्नन मियाँ ने कभी कुलसुमसे प्रतारणा नहीं की। जीवनमें कई बार जेल चले गये, बुढ़ापेमें अनेक ठोकरें खाईं लेकिन इस प्रेमी जोडीमें कोई अंतर नहीं आया। कुलसुमनेभी दिलसे उनके सामने समर्पण किया।

फुन्नन मियाँ में भलेही कुछ अवगुणहो लेकिन मित्रताके सामने धार्मिकता और हानिलाभ काभी कभी विचार नहीं किया। ठाकुर कुंवरपाल सिंह का साथ देकर वे अपनी मित्रताका सबूत देते है। सैयद परिवार इस अपराध के लिए उन्हें टाट बाहर कर देते हैं और उनका हुक्कापानी भी बन्द किया जाता है। अपनी जातिका स्वाभिमान उन्हें है और इसके लिए वे कभी कभी जुलाहोंको ललकारते भी है। अपने जीवनमें कभी उन्होंने किसीके सामने हाथ नहीं फैलाया, और न कभी किसीसे माफी माँगी।

उनके जीवन और व्यक्तित्व को सुन्दर बनाने वाले दो प्रसंग है। पहले प्रसंगमें पुत्री की मृत्यु हुई है। बिरादरी से बाहर किये हुये है। ऐसे समय वे हकीम साहब के पास गिड़गिड़ाते हुये माफी माँगने नहीं गये, अपितु अपने कुछ हिन्दू - मुसलमान दोस्तोंको साथ लेकर उसका अंत्य संस्कार कर आये। लेखकने इस प्रसंगका बड़ाही हृदयस्पर्शी वर्णन किया है। ऐसे दुःखद प्रसंगपर भी कोईभी मियाँ उनके दरवाजेतक नहीं आया। यहाँपर जो उन्होंने हिम्मतसे काम लिया और लाश स्वयं कब्रमें उतारनेपर अल्लाहसे जो प्रार्थना की वह हृदय हिलानेवाली है। पूरा प्रसंग अत्यंत प्राणवान बन गया है।" फुन्नन मियाँ जब गंगौलीमें दाखिलहुये तो बदहन

की पालकी जा रही थी आगे आगे एक लकड़ियामें मुईनुद्दीन था । उसकी लड़की की टाँग कटी हुई एक तरफ रखी थी । फुन्नन मियाँने जाती हुई बारात के लिए रास्ता छोड दिया ।"[1]

दूसरा प्रसंग तो वह है जब फुन्नन मियाँ की ठाकुर कुँवरपालसिंह के साथ लाठियोंसे लड़ाई हुई । दोनों मित्र एकही जल्लाद के बेटे और लठैतीमें एक दूसरेसे बढ़कर । इस प्रसंग को लेखकने इतना प्राणवान बनाया है कि दोनोंके व्यक्तित्व की गुरुता स्पष्ट हो जाती है । ठाकुर कुँवरपालसिंह घायल होकर गिर जाते हैं और फुन्नन मियाँ को " लड़ोफ़ाई मुबारक होये " कहकर मुबारक बाद देकर अपना अंतिम दम तोड़ते हैं । उस समय फुन्ननमियाँ की आँखें एकदम भीग गईं और वे बच्चोंकी तरह बिलख बिलखकर रोये । दोस्तीकी यह मिसाल सदियोंमें एकबार देखनेको मिलती है ।

फुन्नन मियाँ का काज़िमाबाद के थानेदारसे सतत संघर्ष रहा । विशेषतः हरनारायण प्रसाद सिंह से उनकी टकराहट, गुलाबिजान चंदाबाई और अशफ़ुल्ला खाँन के लौंडे के साथ फुन्नन मियाँका अक्खड़ व्यवहार, अपने अभिमान पर चोट लगनेपर हर खतरे को झेलना, अपने लड़के के स्थानपर माफ़ी न माँगकर लंबी जेल भुगतना, उनके व्यक्तित्व की ये विशेषताएँ उनके स्वतंत्र व्यक्तित्व को अप्रतिम रूपमें मूर्त करती हैं ।

फुन्नन मियाँ का यह अक्खड़ व्यक्तित्व धीरे धीरे अन्दरसे टूटता चला जा रहा था । ज़मींदारी के नष्ट होने के साथ साथ उन्होंने परसराम का साथ देना शुरू किया, ताकि रोजी रोटी चलती रहे । बाहरसे वज्र के समान कठोर दिखाई देनेवाला यह आदमी अंदरसे फूलसे भी कोमल था । इसका उदाहरण काज़िमाबादके शहीदस्मारक समारोह में दिखाई देता है । अपने लाडले बेटे मुम्ताज़ का शहीदों के रूपमें गौरव होनेवाला है यह सुनकर यह बूढ़ा अन्दरसे कितना

---

१. आधा गाँव - डॉ.राही मासूम रज़ा - पृ.सं.१७५ ।

गौशान्वित हुआ होगा ? लेकिन छाहोतोंमें केवल ठाकुर हरिपाल और गोवरधन का नाम सुनकर यह व्यक्ति अवरज में पड़ जाता है और खड़े हुये लोगोंसे कहता है " ए साहब ! हिऊँ एक ठो हमरहू बेटा मारा गया रहा । अइसा जना रहा की कोई आपको ओका नाम बताइस । ओका नाम मुन्ताज रहा ।[1]" जब उन्होंने पाँड़ की ओर देखा तो उनकी गरदन सबसे ज्यादा तनी हुई थी । अंतमें एकदिन हमलेका शिकार बनकर यह शेर दिल व्यक्तित्व लुप्त हो जाता है ।

(२) मिग्दाद --

मिग्दाद और फुन्नन मियाँ के व्यक्तित्व में बहुत बातें समानता रखती है । मिग्दाद भी शरीर से बलवान है। हम्माद मियाँने सोच समझाकर उसे तालीम नहीं दी थी । मिग्दाद स्वभावसे मुँहफट, अक्खड और निडर है । फुन्ननमियाँ की तरह वह भी अपनी आत्माकी आवाज को महत्त्व देता है । फुन्ननमियाँ की तरह वह भी अपनी प्रेयसी के प्रति वफादार और विशेष रूपसे आकर्षित है । सैफुन्नियासे शादी करनेपर वह भी घर और ठाटसे बाहर कर दिया जाता है । सैफुन्निया एक नाइन की बेटी है हम्माद मियाँ जमींदार का बेटा प्रेम करे यह बात हम्मादमियाँ झेलही नहीं सके । मिग्दाद सैफुन्नियासे इतना प्रेम करता था कि यदि सैफुन्नियाँ और उसके सम्बन्धों को लेकर जुमलेबाजी करने की कोशिश करता तो वह उसकी माँ बहन पर गालियाँ देकर उसकी जबानतक खींचने दौडता । लेखकने मिग्दाद - सैफुन्निया प्रेम को धीरे धीरे ऊँचे धरातलपर पहुँचाया है ।

मिग्दाद को अपनी खेतोंसे और बैलोंसे भी बेहद प्रेम था । उसने पिता हम्माद मियाँसे उसने अपने नापकी खेती छीनली थी । और जब पिताने उसमेंसे एक टुकडा फिर हथियाना चाहा तो मिग्दाद अड गया और पितासे कहने लगा -- " हम ई कहे आये हैं की मँगरेपरवाली जमीन हमरी है, और ओह मार्ई के लाल दम होये ऊ हुआँ आके हम्मे हटाके ओको जोत ले ।[2]" लेकिन ऐसा हिम्मतवाला

---

१. आधा गाँव - ले.राही मासूम रजा - पृ.सं.२०१ ।

२. आधा गाँव - ले.राही मासूम रजा - पृ.सं.२४१ ।

युवक भी अंदरसे टूट जाता है, जब उसे यह पता लगता है कि सैफुन्निया उसकी आपकी की औलाद है । अपने हृदयकी यह तीव्र पीड़ा तो वह सैफुन्नियासे नहीं कहता लेकिन दिन ब दिन उसके प्रति देखनेका दृष्टिकोण ही बदल जाता है । सैफुन्निया को इस परिवर्तन का कुछभी पता नहीं चल सकता । वह बेचारी तो एक छोटी लड़की को छोड़कर एक दिन चल बसी । लेखकने इस सारे प्रसंग को अत्यंत कलात्मकतासे अंकित किया है। उसने बाप से भी उसने इस बातका जवाब माँगा और जब बाप की जबान बन्द पाई तो उसका रोमरोम सिहर उठा । वहाँ उपस्थित सभी लोगोंको चेतावनी देते हुये उसने कहा कि " सैफुन्निया हमरी कोई होय । बाकी नक्को हमरी बेटी है ।"[1] उसने सबको धमकाते हुये कहा कि यह बात सैफुन्नियाको मोईने बताए । फिस्सू मियाँ का पूरा व्यक्तित्व पाठकोंको प्रभावित करता है । उसे अपनी जमीन, खेत से इतना प्यार है कि वह पाकिस्तान जानेवालोंकी खिल्ली उड़ाता है । उपन्यासकारने फिस्सू मियाँ के रूपमें एक अनोखे व्यक्तित्व का निर्माण किया है ।

(२) हकीम साहब --

हकीम साहब गंगौलीकेमियाँ लोगोंकी तहजीब के प्रतिनिधि हैं । व्यवसाय हकीमीकाहै लेकिन छुआ छूत का बड़ा ध्यान रखते हैं । सैयदोंकी पाक हड्डी और खून का उन्हें बड़ा अभिमान था । स्वार्थ और सेवा का अनोखा घुला मिला रूप उनमें देखने को मिलता है । पट्टीदारी का अभिमान उनमेंभी है और दक्खिन पट्टी के लोगोंसे उनकी अनबन होती रहती है । गंगौलीमें उन्होंने ही पहलीबार रेल देखी थी और एक रेल खरीदनेका सपना पाल रखा था । अन्य लोगों के साथ साथ इनकी भी जमींदारी नष्ट हो गई । लड़के को पढ़ाया लेकिन वह बीवी बच्चोंका बोझा डालकर पाकिस्तान चला गया । बुढ़ापेमें सभी संकट एक साथ आये । ऐसे में ही डॉक्टर कमालुद्दीनने सभी मरीज छीन लिये और इनका दवाखाना सूना हो गया । घर चलाना मुश्किल हो गया । लेकिन स्वाभिमान ऐसा कि वे अपने बेटे सद्दन को साफ्साफ नहीं लिख सके । इसके पीछे उनका खानदानी अभिमानही था । सद्दन की तीन संतानें, बहू और बेटियोंका बोझा, छुनरमवाँ (परसराम के पिता)

---

1. आधा गाँव - डे.राही मासूम रजा - पृ.सं.१५१ ।

चमार का कर्त्ता और उसके द्वारा जारी सम्मन उनको हकीमोंको कमालुद्दीन द्वारा दिया गया चैलेंज, इन सबने हकीम साहबको तनहा बनाकर तोड़ दिया ।

हकीम साहब का अंत भी अत्यंत करुण दिखाया गया है । बुढ़ापेमें यह भी देखना पड़ा कि खुद की बेटी कमारुद्दीन के यहाँसे सफेद गोलियाँ लाती है । नियति भी बड़ी क्रूर होती है । एकदिन पाखानेमें पैर फिसल जाने से गिर पड़ते हैं । पैरकी हड्डी टूट जाती है और हरामी कम्मोको होमियोपैथी की गोलियाँ खानेपर मजबूर होना पड़ता है ।

धीरे धीरे यह व्यक्तित्व अंदरसे टूट जाता है और कराहते हुये एक दिन मर जाता है । इन पात्रोंके अतिरिक्त तन्नू और हम्माद मियाँ काफी चित्रण उभरकर आया है । तन्नूको गंगौली की मिट्टीसे, यहाँके लोगोंसे और मोहर्रम की मजलिसोंसे आत्मीय प्यार है, फिर भी वह सईदा की तनहाई न सह पाने के कारण अपने बीवी बच्चों को छोड़कर पाकिस्तान चला जाता है । हम्माद मियाँ अंतक अपनी जमींदारी के दावपेंच खेलते रहते हैं, और परसरामपर भ्रष्टाचारका आरोप लगाकर मुकदमा करते हैं और उसे जेल भिजवाते हैं ।

पात्रोंकी काफी भीड़भाड़ होते हुये भी, लेखकने फुन्नन मियाँ, फिरदौस, हकीमसाहब जैसे उपपात्रोंका निर्माण किया हैं । लेकिन ये सभी चरित्र एक सीमा के बाद इस गाँवके चरित्र के ही अंग बन जाते हैं । हम कह सकते हैं कि इस पूरे उपन्यासमें तराशा हुआ चरित्र यदि किसीका है, तो वह गंगौलीका । मेले के लोग अपने आपमें कितने भी सजीव और विशिष्ट क्योंन हों उन सबको उस दायरेमें देखनेपर मेलेकाही चरित्र सामने आता है । इस उपन्यास में भी सभी चरित्र इस गंगौली नामक पात्र के चरित्र की रेखाएँ मात्र हैं ।

कथोपकथन --

नाटकमें कथोपकथन का जितना महत्व होता है उतना उपन्यास में नहीं । कथोपकथन किसी कथात्मक रचनाको प्रवाही बनाने के लिए अवश्य उपयोगी सिद्ध हुआ है । कथोपकथनसे रचनामें यथार्थ का आभास निर्माण किया जा सकता है ।

आँचलिक उपन्यासोंमें कथोपकथन को एक अलग ही महत्व प्राप्त हो गया है। " आधा गाँव " उपन्यास गंगौली के मियाँ लोगोंके दुःखों की कहानी है। इस कहानीको प्रत्यक्ष करनेके लिए, वहाँ के लोगों को उनकी समग्रताके साथ उपस्थित करना आवश्यक था। लेखकने उपन्यासमें जो पात्र रखे हैं उनके मुँह में उनकी ही बोली रखकर उपन्यासको प्राणवान बनाया है। उपन्यास में जो कथोपकथन है वह पात्रोंके व्यक्तित्व को साकार करनेमें सहायक सिद्ध हुए हैं। लेखकने अपनी सारी कथाको कथोपकथन के माध्यमसे आगे बढाया है। उपन्यास के संवाद इतने प्राणवान और रोचक है कि पाठक इनमें उलझाते जाता है और उपन्यास पढ़करही दम लेता है। वैसे उपन्यासमें आये मोहर्रम के बार बार वर्णनसे पाठकको उकताहट होती है लेकिन फिर बीचमें ही ऐसे चुटीले संवाद पाठककी उकताहट को दूर कर देते हैं। ऐसेही एक चुटीले संवादका उदाहरण देखिए --

सैफुनिया ने कहा --
" आको हमरा तुम्हरा ब्याह कैसे हुई है !"
" दस बीघे की खेती हमरे नाम है।" मिग्दाद बोला
" हम अलग हो जाएँगे।"
" ऊ रहा कहाँ सैयदे ?"
" उहे खिड़कियामें।" मिग्दाद ने कहा " जिहको छोड़के हम लोग हवेलीवाले मकान में आये है।"
" और कौन मियाँ ना रहे दिहिन ?"
" तै ई सब मत सोंच। तै बस ई बता कि हमसे ब्याह करबे की ना करब ?"
" इहे त मुश्किल है। ई हो ना कह सकत की ना करौंगे,
ऊ ई हो ना कह सकत कि करौंगे।"
" ई का बात भई ?"
" डर लगेला हम्मे।"
" ब्याह से ?"
" नाही।"
" अब्बासे ?"

" नाही ।"

" फिर कैसे ? हमसे ? "

इस बार उसने " हाँ " में गरदन हिलादी "[१]

उपन्यासमें ऐसे चुटीले संवाद तो हैं ही साथ ही हृदय हिला देनेवाले संवाद भी हैं। इन संवादोंने उपन्यास को एक गरिमा प्रदान की है। पात्रों के भावों को, उनके स्वभाव को और घटनाओंको साकार करनेमें राही के संवाद पूर्णत: सक्षम हैं। इन संवादों में प्रवाह है, तीव्रता है, व्यंग्य और वक्रता है, साथही रोचकता और मिठास है। केवल राही के चुस्त संवादोंके कारणही पाठक ऊबता नहीं है।

भाषा और शैली --

राही के इस उपन्यास की सबसे ज्यादा आलोचना इसकी भाषा को लेकर हुई है। प्रसिद्ध समालोचक ज्ञानचंद गुप्त इनकी भाषापर टिप्पणी करते हुये लिखते हैं - " गंगौली गांवको गालियोंका साम्राज्य बनादेना लेखकीय प्रयोग शीलता है। अधिकतर गालियाँ, गालियोंके लिएही प्रयुक्त हुई दृष्टिगोचर होती हैं। जिसमें रचनात्मकता की माँग कम और लेखकीय मनोवृत्तिही बोलता है।"[२]
डॉ. सत्यनारायण उपाध्याय लिखते हैं - " इस उपन्यासकारने गांवोंमें होनेवाले वार्तालाप और उनमे प्रयुक्त होनेवाली अश्लील गालियां तक को ज्यों का त्यों रख दिया है। . . . . . इस उपन्यास की भाषा स्थानीय शब्दोंके बाहुल्यसे नया तेवर लिए हुये है।"[३] श्री भगवान सिंह इनकी भाषा को लेकर लिखते हैं -- " इसमें सन्देह नही कि अधिकांश स्थलोंपर लेखकने गालियोंका इतना सुन्दर उपयोग किया है कि लगता है कि इन गालियों को हटा दे तो इन वाक्योंका प्राण ही मर जायेगा।"[४] साहित्यमें इस तरह की गालियोंका प्रयोग विवाद का विषय

---

१. आधा गाँव - ले.राही मासूम रजा - पृ. सं.१६७ ।
२. आंचलिक उपन्यास - संवेदना और शिल्प - ले.- ज्ञानचंद गुप्त, पृ.सं.७० ।
३. आंचलिक उपन्यास और रेणु - ले.डॉ.सत्यनारायण उपाध्याय,पृ.सं.१४८ ।
४. समय की सलवटें और आधा गाँव - ले.भगवानसिंह - पृ.सं.१४९ --
-- आलोचना (त्रैमासिक) जुलाई - सितम्बर,१९६७ ।

हो सकता है लेकिन इस तरह की बहस छेड़ने के पहले यह भी देखा जाना आवश्यक है कि उपन्यास के पात्र किस वर्ग के हैं ? उनकी सामाजिक हैसियत क्या है ? और उनके व्यक्तित्व को यथार्थ रूपमें साकार करने के लिए किस भाषा की आवश्यकता है । किसी पात्र का समूचा व्यक्तित्व लेखक के तभी हाथ लग सकता है, जब लेखक उसकी अच्छाइयों और बुराइयोंको एक साथ सच्चाईसे ग्रहण करे । लेखकने जिस भाषा का उपयोग किया है वह वास्तवमें साहस और शक्तिका प्रतीक है । उपन्यासके सभी पात्र अपनी पूरी सच्चाई के साथ उपन्यासमें उपस्थित हुये हैं । सही और सार्थक भाषा चमकीले और पालिश किये हुये शब्दोंकीही नहीं हुआ करती । इसमें कुछ पैने कोर और कोनेभी हुआ करते हैं । " आधा गाँव " की भाषा उस गांवकी मिट्टीको खरोंचकर निकाली गई भाषा है । हर एक प्रदेश के व्यक्तियोंके जीवन का अपना एक खास लहजा, एक खास रंग और अपनी एक खास लय हुआ करती है । यह विशेषताएँ वहाँ की बोली भाषामें ज्योंकि त्यों प्रगट होती रहती हैं । भाषा के सही लहजेकी पकड़ जिन्दगीके सही लहजे की पकड़ का नाम है । इस दृष्टिसे विचार करनेपर राही का अपनी भाषापर पूरा अधिकार है । " धपड़ा फूल बाड़ा लोग "," गज़ब होत गईल मियाँ ","एकौ छूछै छुली हम्मे फसा लिहिस तन्नु भाई ।" इस तरह के वाक्य और कुल,टरोंना,होयेगवा, किहिस,क्यारहा आदि शब्द भोजपुरी के तेवर को स्पष्ट करते हैं, तो हालते हाजरा,माशूक, आवाजे बुलंद, लब्बजकुअ आदि शब्द उर्दू की छाप छोड़ जाते हैं ।

"आधा गाँव " की भाषिक उपलब्धियाँ भी कम महत्वपूर्ण नहीं हैं । भाषा विज्ञान के रास्ते नहीं लेकिन एक जिन्दा हिन्दी किताब के साक्ष्य में यह कहनेका मार्ग प्रशस्त हुआ है कि उर्दू, कोई स्वतंत्र भाषा होनेसे अधिक हिन्दीकी एक शैली है । विद्यार्थी, उद्गम, पगडण्डी, संयोग, परम्परा, आकांक्षा ऐसे कुछ सौ, पचास शब्द हैं जो संस्कृत निष्ठ हिन्दी के कहे जा सकते हैं । इन बातों को ध्यानमें रखनेपर यह निश्चित कहा जा सकता है कि " आधा गाँव" यह हिन्दी का एक गौरव ग्रंथ है । उर्दू - भोजपुरी दोनोंका लोकभाषाई रंग मिलकर एक नया स्वाद पैदा होता है । उर्दू और भोजपुरी के सम्यक उपयोग के कारण उपन्यास के

पात्रोंको प्रामाणिक चेहरे प्रदान करने में लेखक सफल हुआ है। बोलचाल के भोजपुरी - उर्दू के वाक्य अनुभूतियों के विविध स्तरोंको खोलनेमें समर्थ दिखाई पड़ते हैं। काव्यात्मकता व्यंग्यात्मकता और रिपोर्ताज शैली के कारण कहीं कहीं पर दुर्बोधता और अस्पष्टता आगई है। अहिन्दी भाषी प्रदेशों के पाठकों के लिए यह उपन्यास पढ़ना एक साहस की अपेक्षा करता है। उसका कारण यह है कि उपन्यास के पहलेही वाक्यमें उपन्यास की भाषा की पकड़ ठीक तरहसे हाथ नहीं लगती, लेकिन दूसरे तीसरे वाक्यमें वह इस उपन्यास की भाषा की डोर पकड़ लेता है और फिर पूरा उपन्यास उसे अलगही आनंद देता है।

बोली के प्रौढ़लेखकों की हुई राही की इस भाषामें मुहावरे, कहावतें और गालियोंकी भरमार है। कोई एक दर्जन संगीत गालियाँ जिनका प्रयोग कुछ मिलाकर तीन दर्जन बारसे अधिक बार उपन्यासमें हुआ है। लेकिन गाली बकनेवाले लोग किसी न किसी कारणवश क्रुद्ध, और पीड़ित और निराश हैं। सुसंस्कृत समाज में भलेही गालियाँ वर्ज्य हों लेकिन हमे यह ध्यान में रखना होगा कि आजभी भारतकी अस्सी प्रतिशत जनता देहातोंमें रहती है और उसमें पचास प्रतिशत से ज्यादा लोग अनपढ़ हैं। " यह गालियाँ न केवल उस जीवन का तकिया कलाम है, ऐसे केवल पीड़ा, क्रोध और बेबसी को अधिक तीखा बना देते हैं, अपितु उससे भी आगे बढ़कर ये दो व्यक्तियोंकी सामाजिक हैसियत को भी रेखांकित करती हैं।"[1]

संक्षेप में रचना की भाषामें प्रवाह, रोचकता, चुलबुलापन व्यंग्य और वक्रता की तीक्ष्णता है जो अपने पात्रों को सही न्याय देसकी है। इसका मतलब यह नहीं कि उनकी भाषा एकदम सदोष है। कह तरों के लिए, कलहरी, मारिहो के स्थानपर मरी हो जैसे गलत शब्द अनजानेमें आगये है। कहीं कहींपर वर्णन के बहानोंमें संवाद लड़खड़ाये हैं और भाषाकी पकड़ ढीली पड़ गई है।

---

१. समय की सलवटें और आधा गाँव - डॉ.भगवानसिंह, पृ.सं.१४५ --
-- आलोचना (त्रैमासिक) जुलाई - सितम्बर, १९६७।

शैली --

राही का " आधा गाँव " उपन्यास अपनी अलग ही शैली लिए हुये है । चन्द्रकान्त बाँदिवडेकर इसे बतकहिया शैलीका नाम देते हैं ।" राही की शैली बतकहिया शैली है और उसमें व्यंग्य विनोद वक्रता का पर्याप्त उपयोग किया गया है ।"[1] रिपोर्ताज शैलीकी प्रयोग धर्मिता तो पूरे उपन्यास में देखने को मिलती है । राहीने अपने उपन्यास को अधिक रोचक बनाने के लिए यौन सम्बन्धोंका बड़ा खुलकर वर्णन किया है । इनमेंसे कुछ सम्बन्ध बड़े सुन्दर बन पड़े हैं । विशेषत: अब्बास और सितारों के बीच का यौवन के द्वारपर का शारीरिक आकर्षण, जो अंतमें सितारके परिवार को गंगौली छोड़ने के लिए बाध्य करता है, अत्यंत स्वाभाविक और रोचक बन पड़ा है । उसी तरह के पहले दर्शन का गुलाबीजान की भावनासे किया हुआ वर्णन रोचक बन पड़ा है । मौलवी बेदार हुसैन का बछनियाको बयान भेजना और सैयदिनोंका सत्याग्रह, सिफरवा बछनिया का भाग जाना और इस प्रसंग की परिणति झंगटिया बो और कुलसुम की आत्महत्या में बताकर राहीने मूल्यवान निष्कर्षोंका परिचय दिया है । इस तरह के रोचक और भावनाओंको हिलानेवाले प्रसंग इस उपन्यास में भर पड़े हैं ।

शैलीके अन्तर्गत व्यंग्य का विचार करना इस उपन्यासके सन्दर्भ में आवश्यक है । राही ने जो व्यंग्य की बौछार की है, वे सभी व्यंग्य सीधे जीवनसे उठाये गये हैं । ये व्यंग्य केवल भाषा चमत्कार के लिए नहीं हैं, तो वे स्वाभाविक रूपसे उभरकर आये हुये हैं । मजलिस में मच्छू का बेहोश हो जाना और दक्खिन पट्टीका अपने किसी आदमीका बेहोश नही हो पाने की लाचारीपर अपने को लानत भेजना, मासूम का बहोश होने की कला का अभ्यास करना, हम्माद मियाँ का अपने बड़े भाई की शेरवानी का बक्स पा जाने के बाद उर्दू बोलना शुरू करना, अपनी भतीजी के नौहा पढने के पहले मौकेपर सिब्बू और सईदमियाँ की बीवियोंका

---

1. उपन्यास स्थिति और गति - ले.चन्द्रकांत बाँदिवडेकर - पृ.सं.१६९ ।

की लगाकर कमकर रोना, हकीम साहब का रेलगाडी का सपना और वह टूटनेपर छोड़ेका ऐसा हाथी खरीदनेका सपना देखना जिसका काम छोटेसे अस्तबलसेही चल जाएगा और गल्ला नही खाता बल्कि तेल मकबाला अंग्रेजी मिट्टीका तेल पीता है, आदि ऐसे उदाहरण है जो व्यंग्य की तीक्ष्णता का पता देते हैं। इसके अतिरिक्त अल्ला रखु का नवका हिन्दोमें लिखा जानेपर सईदा की माँ का अपने गालोंपर तमाचे मारना, सईदा का हँसना और फिर चुप होकर अपने गालपर हल्के हल्के तमाचे मारकर तोबा - तोबा करना और खुदासे माफी माँगना क्योंकि आठ मोहर्रम को हसनेवालोंपर खुदा की फटकार पड़ती है। ये सभी व्यंग्य गढ़े हुये नहीं है, बल्कि जिन्दगीसे उभारे हुये व्यंग्य हैं और व्यंग्य से अधिक व्यंग्यपूर्ण जिन्दगी को सामने लाते हैं।

घटनाओंके वर्णनमें लेखकने संयम और धैर्य से काम लिया है। कहीं पर भी अतिरिक्त भावुकता नजर नहीं आती। उसीतरह किसी आदर्शीकरण के पीछे भी लेखक नहीं पड़ा है।

शिल्प --

"आधा गाँव" उपन्यास अपने विशिष्ट शिल्प के कारण भी चर्चा का विषय बना। कथा में आशयगत समृद्धि होने के बावजूद केवल कथा संघटनमें बिखराव के कारण इस उपन्यासमें उलझाव पैदा हो गया है। यह उलझाव पात्रोंकी भीड़ के कारणही आया है। कथामें इतने पात्रोंकी भीड़ है कि इनकी भीड़ में कथा रेखा को पाठक ठीक तरहसे नहीं पकड़ सकता। पूरा उपन्यास रिपोर्ताज शैलीमें लिखा हुआ है। लेखक एक घटना का वर्णन करते हुये उसमें आये हुये पात्रोंका परिचय देने लगता है और कथा आगे बढ़ने लगती है। लेखक की दृष्टि विविध पात्रों को रूपायित करते हुये मनोविश्लेषणसे उनकी मानसिक स्थितियोंका चित्रण करती है। मुस्लिम पर्व त्यौहारोंका वर्णन लेखकने अत्यंत आत्मीयतासे किया है। लेखक अपने गाँव के हर एक व्यक्ति को व्यक्तिगत रूपसे जानता है और इनलोगों से उसे बेहदप्यार है। लेकिन यह प्यारही उसके कलाकार पर हावी हो

गया है। परिणामतः औचित्य और अनुपात को वह भूल गया है " मेरा गाँव मेरे लोग " अध्याय में मासूम भाईसाहब के साथ भाग रहा है। अम्मी पीछा करती है। लेकिन यहाँ इस प्रसंग को तोड़कर सैयद घरानों के वैवाहिक संबंधोंकी जानकारी देने लगता है। यह वर्णन इतना ब्यौरेवार है कि कथा में जिन लोगोंका आगे कुछ सम्बन्ध नहीं है उनका वर्णन करता है। वर्णन करते समय क्रम और अनुपातका बिलकुल ध्यान नहीं रहा है। उद्गम प्रकरणमें कथा झांगटिया बो के अकेलेपनसे प्रारंभ होती है और बादमें पूरी कथा नज्जन परिवार के उजड़ जाने की है। वैसे नज्जन परिवार की कथा रोचक रहनेपरभी उपन्यास की मूल कथा में उसका कोई औचित्य नहीं है।

यही बात प्रसंगोंको विश्वसनीय बनाने के सम्बन्धमें है। कोमिला को फाँसी की सजा होना अपराध के अनुपात में असंगत है। गोबरधन के सपनों कोभी विश्वसनीय नहीं बनाया गया है। थानेदार कासीमाबाद को इतना बेवकूफ बताया है कि वह उसके सपनों को सही मानकर चलता है और वही गोबरधन आगे चलकर थानेपर हमला करनेवालोंमें सबसे आगे रहता है। सैफुनिया के जन्म की कहानी सारे गाँव को मालूम है तब यह बात मिगदाद और सैफुनिया के लिए अज्ञात कैसे रह सकती है, जब कि यहाँ की सभी औरतें मुँहफट और एक दूसरे के अवैध सम्बन्धोंको लेकर चर्चा और अफवाहें फैलानेवाली हैं। यहाँपर सभी कथा बनी बनाई और काल्पनिक लगती है।

इसतरह की रचनागत कमियाँ उपन्यासमें बहुत जगहोंपर मिलती हैं। प्रकरण के नामकरण में गफलत है। " प्यास " में तन्नू के गंगौली वापस आने की कथा है, लेकिन बीचमेंही पाकिस्तान की चर्चा छिड़ जाती है, और कथामें बिखराव आकर तन्नू अलग जा पड़ता है। इसमेंही मिगदाद के रूठने की कथा आई है, जिसका " प्यास " से कोई सम्बन्ध नहीं है।

कुछ प्रसंग ऐसे हैं "जिनको लेखक अधिक जानदार और प्रभावशाली बना सकता था। सैफुनिया की बीमारी और मिगदाद का परिवर्तित आचरण अत्यंत

सामान्य घटना बनाकर प्रस्तुत किया गया है । उपन्यासमें कहीं कहीं संवेदन शून्य, उबाऊ और असंतुलित विवरणों की भी भरमार है और लेखक की पुनरावृत्ति की आदत पाठक को बारबार खलती है ।

लेखकने अंतिम दो प्रकरणों के पहले भूमिका देकर एक नया ही प्रयोग किया है । ज्ञानचंद गुप्त के अनुसार " अंतिम दो अध्यायों के पूर्व " भूमिका " भी लेखकीय शैलीगत प्रयोगशीलता की ही देन है न कि अनिवार्यता की उपज, जैसा कि लेखक साबित करता है ।"[1]

संक्षेपमें कहा जा सकता है कि विश्वसनीयता, औचित्य, तारतम्य और अनुपात कहीं कहीं टूट जाने के कारण कथामें आशयगत समृद्धि होने के बावजूद उपन्यास कभी नीरस और कभी दम तोड़नेवाला लगता है ।

<u>आँचलिकता --</u>

राही के " आधा गाँव " इस उपन्यास को समीक्षकोंने आँचलिक उपन्यास की श्रेणीमें रखा है । डॉ. ज्ञानचंद गुप्त, सुश्री कुमारी शर्मा, विवेकीराय, सत्यनारायण उपाध्याय आदि आलोचक इसे आँचलिक उपन्यास मानते हैं । फणीश्वरनाथ रेणुके " मैला आँचल" से हिन्दीमें आँचलिक उपन्यासोंका आरंभ माना जाता है ।

धनंजय वर्माने आँचलिक उपन्यासोंकी परिभाषा देते हुये लिखा है -- " उपन्यासोंमें लोक रंगोंको उभारकर किसी अंचल विशेष का प्रतिनिधित्व करनेवाले उपन्यासोंको आँचलिक उपन्यास माना जायेगा "[2] आँचलिक उपन्यासों ने उपन्यास के शिल्प में एक नया मोड़ लाया है । इनमें न पारम्पारिक कथानक होता है न नायक । लेखक की दृष्टि बहु आयामी होती है । आँचलिक उपन्यासकी

---

१. आँचलिक उपन्यास - संवेदना और शिल्प - ले.ज्ञानचंद गुप्त,पृ.सं.७१ ।

२. "आलोचना"(त्रैमासिक) - अक्तूबर १९६७ , " आँचलिक उपन्यास " -- -- ले.डॉ.धनंजय वर्मा ।

गति एक दिशामें नहीं चारों दिशाओंमें होती है । वह स्थान की अपेक्षा समय में जीता है । इसमें अनेक पात्र होते हैं । हर पात्र की सत्ता महत्वपूर्ण होती है । इसमें कोई पात्र एक दूसरे के निमित्त नहीं होता । वे सब अंचलके निमित्त होते हैं ।

संक्षेपमें आंचलिक उपन्यासोंकी विशेषताएँ निम्न प्रकारसे कही जा सकती है । उसे नवीन कथा विन्यास हो, जटिल यथार्थवादी विशिष्ट परिवेश, पात्रोंकी परिवर्तित मन:स्थितियाँ, आंचलिक सन्दर्भों एवं स्वरोंसे स्वरचित भाषा तथा बिम्बों, प्रतीकों और रंगों की अद्भुत योजना रहना आवश्यक माना गया है ।

इन विशेषताओं के आधारपर जब हम " आधागाँव " की ओर देखते हैं तो पता चलता है कि " आधा गाँव " में ये सभी विशेषताएँ पाई जाती हैं ।

" आधा गाँव " का कथानक एकदम अलग है । " आधा गाँव " कथानक का आंचलिक एकता घटना और पात्रोंसे सम्बन्धित नहोकर गंगौली इस छोटे गाँव समग्रता एवं संपूर्णता को उजागर करना लेखक का लक्ष्य रहा है । कथाविन्यासमें विविधता एवं वस्तुनिष्ठता आंचलिक उपन्यासोंकी विशेषता होती है । "आधा - गाँव " के कथाविन्यास में भी विविधता और वस्तुनिष्ठता देखनेको मिलती है । यही कारण है कि "आधा गाँव" के कथाविन्यास में बिखराव का आभास होता है । " आधा गाँव" उपन्यास का परिवेश जटिल और यथार्थवादी है । लेखक ने प्राकृतिक एवं भौगोलिक स्थितिका वर्णन नहीं किया है, उसकी सारी दृष्टि गंगौलीके लोगोंपरही लगी हुई है । वहाँ के लोगोंकी विविधता को और आपसी जटिल सम्बन्धोंको लेखकने यथार्थ में चित्रित किया है । गंगौलीके विशिष्ट परिवेश से लेखक परिचितही नही स्वयं भोक्ता भी है । जिसके कारण लेखकने अनुभवकी प्रामाणिकता और यथार्थ की गहरी पहचान रखकर वहाँ के सामाजिक एवं धार्मिक रीतियोंका, उत्सवोंका ,त्योहारोंका, रहनसहनका,संघर्ष और प्रेम का जमाकर वर्णन किया है ।

आंचलिक उपन्यासोंमें पात्रों की दृष्टि परंपरासे भिन्न होती है ।

अंचल की विविधताको रूप देने के लिए लेखक सभी कोनोंपर खड़ा होकर, उनकी परिवर्तित मन:स्थितियों का वर्णन करता है। " आधा गाँव " में लेखकने अनेक पात्रोंका अलग अलग कोनोंपर खड़ा होकर उनके परिवर्तित मन:स्थितिका सुन्दर चित्रण किया है। हम्मादमियाँ, फुन्नममियाँ, हकीमसाहब, मिग्दाद और टन्नू इसके अच्छे उदाहरण हैं। "आधा गाँव " के सभी पात्र केवल गंगौली के निमित्त मात्र हैं। यहाँ पर भी न कोई नायक है और न कोई नायिका। सभी पात्र गंगौली की मिट्टी से गढ़े हुये हैं। लेखकने गंगौली ग्राम की बदलती हुई स्थितियोंका, उभरते नये मूल्योंका, टूटते बनते सम्बन्धोंको उनकी मानसिकताको यथार्थ रूपमें प्रस्तुत किया है।

आँचलिक उपन्यासोंकी सबसे अधिक महत्वपूर्ण विशेषता उसकी भाषा है। अँचल की जनभाषाको उपन्यास की भाषाका माध्यम बनाया जाता है। राहीने " आधागाँव" में गंगौली की जनभाषा भोजपुरी और उर्दू कोही चुना है। इस भाषा के आधारपर लेखकने वहाँ के जीवनका, पात्रोंकी परिवर्तित मन:स्थितिका और जीवन का यथार्थ चुनौतियोंका सुन्दर वर्णन किया है। जिसके कारण गंगौलीके जन जीवनको समूची संवेदनात्मक तस्वीर सफलताके साथ अंकित हो पाई है।

आँचलिक उपन्यासोंमें बिम्बों, प्रतीकों और रंगोंकी योजना कर यथार्थ की सघन बुनावट की जाती है। इसके लिए नये शिल्प की तलाश होती है, जिसमें कथाकार इतिवृत्तात्मकता, आत्मकथनात्मकता, रेखाचित्र, लोककथा, रिपोर्ताज, डायरी और व्यंग्यात्मक शैलीका उपयोग करता है। "आधा गाँव " में नवीन शिल्प विन्यास देखने को मिलता है। इस कृतिमें रिपोर्ताज शैली, व्यंग्यात्मक शैली और इतिवृत्तात्मकता का मिला जुला रूप देखने को मिलता है। पर्व त्योहारोंके वर्णनने उपन्यासमें नया रंग भर दिया है। नये बिम्बों और प्रतीकोंका उपयोग कर पात्रोंकी संवेदनाओंका सम्प्रेषण पाठकोंतक किया है। गंगौली गाँव की अनेक छुपी विसंगतियाँ कहीं व्यंगोंसे कहीं प्रतीकोंसे कहीं बिम्बोंसे और कहींपर ध्वनियोंसे उजागर हुई है। लेखकने इसमें कई तरह के प्रयोग किये हैं और इस प्रयोगधर्मी दृष्टिकोण के कारण ही उपन्यास अपने प्रदेश में उभरा गया है।

आंचलिक उपन्यासोंकी विशेषताओं के आधारपर इसे आंचलिक उपन्यास तो कहा जा सकता है, लेकिन आंचलिक उपन्यास कहकर एक संकुचित दायरेमें उसे खड़ा करना कहाँतक उचित है । वास्तविकता यह है कि कोई भी उपन्यास किसी एक विशिष्ट प्रदेश, स्थान या वातावरण कोही लेकर लिखा जाता है । कोई भी उपन्यास सार्वभौम नहीं हो सकता । हम उसकी महानता बताने के लिए इस तरहके विशेषण उसे जोड़ते रहते हैं । निश्चयही " आंचलिक " यह विशेषण इस कृतिकी भाषाको लेकर जोड़ा गया है । यदि भाषा को यहाँ से हटादें तो वह विशेषणभी हटता है । इसलिए मेरी दृष्टिसे यह शब्द थोडा भ्रामकही है । कोई भी उपन्यासकार स्थानीय भाषा और शब्दोंका प्रयोग अपने उपन्यास को आंचलिक बनाने के लिए नहीं करता । इस तरहकी भाषाके माध्यमसे वह उस जिन्दगी का मरम को पकड़ सकता है और इसीलिए वह उसका उपयोग करता है । इस तरहसे किसी उपन्यास को आँचलिकताके खाते में डालनेसे आलोचक यह देखना भूल जाता है कि वह रचना कितनी विशिष्ट है और कितनी प्रभावकारी है । वह तो एक सीमित दृष्टि रखकर किसी विशिष्ट विशेषताओंके आधारपर उसे कसकर देखता है, और यदि वे विशेषताएँ उसे मिले तो वह उन्हें किसी विशिष्ट खाते में टाल भी देता है । " आधा गाँव " के सम्बन्ध में यही हुआ है ।

<u>निष्कर्ष</u> --

इस उपन्यास के माध्यमसे पहलीबार मुस्लिम जनजीवन अपनी समग्रता और सम्पूर्णताकेसाथ सामने आया है । इसके पहले मुस्लिम जन जीवन का वर्णन उपन्यासोंमे आया नहीं ऐसा नहीं । लेकिन लेखकने जिस ढंगसे उसको बिनालागलपेट और आत्मीयतासे यथार्थ चित्रण किया है वह इसके पहले कभी देखनेमें नहीं आया था । इसलिए " आधा गाँव " उपन्यास लेखक की एक विशिष्ट कृति होने के साथ साथ हिन्दी साहित्य की असाधारण और महत्वपूर्ण उपलब्धि है ।

3598
A

(आ) टोपी शुक्ला --

डॉ. राही मासूम रजा का " टोपी शुक्ला " यह उपन्यास सन १९६५-६९ में प्रकाशित हुआ । " आधा गाँव " की सफलता के बाद लेखका हिन्दी में लिखा यह दूसरा उपन्यास है । "आधा गाँव " की सफलता के कारण लेखक हिन्दी साहित्य जगतमें प्रसिध्द होही गये थे लेकिन लेखक की सहीपहचान "आधा गाँव " के बाद आये हुये उपन्यासों मे ही मिलती है । " टोपी शुक्ला " में लेखकने " टोपी शुक्ला " इस पात्र के माध्यमसे भारतीय हिन्दू-मुस्लिमोंके मानसमें प्रवेश कर मानवताकी सही तलाश की है ।

कथानक --

" टोपी शुक्ला " की कहानी बलभद्र नारायण शुक्ला उर्फ टोपी शुक्ला इस एक व्यक्तिकी कहानी नही हैं । यह कहानी समय की कहानी है । देश विभाजनके बाद परम्परासे रहती आई हुयी हिन्दु मुस्लिम जनतापर क्या गुजर रही है । परम्परासे भाईचारेके नाते रहते आये हिन्दू-मुस्लिम एक दूसरे से क्यों सौफ खा रहें है ? एक दूसरेके प्रति इनके मनमें क्या है, इन प्रश्नोंकी तलाश लेखक ने " टोपी की जीवन कहानी के माध्यमसे की है । इस उपन्यास के प्रमुख पात्र बलभद्र नारायण शुक्ला उर्फ टोपी शुक्ला, इफ्फन मियाँ, सकीनाबानो, देश विभाजनकी आगमें जलभुनकर निकले है । आज देशमें ऐसे टोपी शुक्ला और इफ्फन मियाँ हमें गलीबाजारमें हर युनिवर्सिटीमें, मतलब देश के चप्पे-चप्पे पर मिलेंगे । आवश्यकता है उनके हृदयमें झाँकने की, उन्हे बारीकीसे देखनेकी ।

आम बच्चों की तरह टोपी भी बेनामही पैदा हुआ । नाम रखा गया " बलभद्र " अर्थात बलभद्र नारायण शुक्ला " नोले लेखवाले " । देखने में कुरुप, रंगकाला, चिपटा नाक, जिसके कारण घर से भी प्यार नही मिला । माता पिता की झिडकारियाँ और बडे भाईयों को उलरनही पहनकर रहना पडा। स्कूल में ही मुसलमानों के प्रति नफरत का बिज बोया गया । इन्हीं दिनों उसकी मुलाकात

उन लोगोंसे हुई जिनसे पता लगा कि मुसलमानोंने किस तरह देश का सत्यानाश किया, मंदिर तोड़कर मस्जिदें बनवाईं, देश का बँटवारा किया, पंजाब बंगालमें लाखों हिन्दुओंको बेदर्दी से मारा । उसे यह भी पता चला कि वे येही लोग है जिन्होंने गांधी को मारा था । बचपनके स्कूली दिनोंमेंही इफ्फन नाम के मुसलमान हमजोलीसे दोस्ती हो गई और वह इतनी गहरी बन गई कि अपने घर की दादी अम्मा से उसे इफ्फनकी दादी अम्मा अधिक नजदीक और प्रिय लगने लगी । घरमें जो नहीं मिल रहा था वह इफ्फन के घर मिलने लगा । लेकिन एक दिन इफ्फन के पिता की बदली हुई और यह बचपन का साथी बिछुड गया । स्कूल की पढ़ाई खत्म होने के बाद वह अलीगढ़ मुस्लिम युनिवर्सिटी से स्कालरशिप पाने की आशा लेकर अलीगढ़ आगया ।

टोपी को पता नही था कि उसका बचपन का दोस्त यहाँ की युनिवर्सिटी में पढानेका काम कर रहा होगा । युनिवर्सिटी के अहातेमें अन्य मित्रोंके साथ उसकी इफ्फनसे मुलाकात हो गई । इफ्फन को अपने बचपन के दोस्त को देखकर बहुत आनंद हुआ ।

इफ्फन की कहानी अलगही रास्तेसे चल रही थी । वह साहित्यका विद्यार्थी और प्रेमी था । स्कूलकी पढ़ाईमें इफ्फन अपने पितासे अनेक प्रश्न पूछकर तंग करते रहता जैसे -- " अब्बू, क्या यह हिन्दू बहुत खराब होते है ? " पाकिस्तान तो मुसलमानों ने बनवाया है ना ? "[1] उसे यह बात बहुत दिनों तक समझमें नहीं आई कि हिन्दू और मुसलमान एक दूसरे का स्पर्श किया हुआ क्यों नहीं खाते । इफ्फन बड़ा होकर अलीगढ़ में प्राध्यापक बन गया । सकीनासे उसका विवाह भी हुआ । टोपी के मिलनेपर दोनों मित्रोंने विगत को एक बार फिर दोहराया । दादी तो पहलेही मर चुकी थी। अब्बू भी चल बसे । मुन्नी का विवाह हुआ और वह अब पति के साथ पाकिस्तानमें रह रही थी ।

---

१. टोपी शुक्ला - राही मासूम रजा - पृ.सं.५२ ।

इफ्फन और टोपी की दोस्ती तो बचपनसे थी लेकिन उस टोपी को यहाँ आकर सकीना का भी प्रेम मिल गया सकीना के पिता पक्के गांधीवादी थे और सकीनाभी हिन्दुओंसे प्रेम करती थी वह महेशको हर साल राखी बांधती थी । लेकिन जैसेही उसके पिताजी आबिद रजा सन पैंतालिसके चुनावमें कांग्रेस के टिकट पर खडे हुये लेकिन मुसलमानोंने इस समय उन्हें हिन्दू कुत्ता करार दिया । एक सभामें उनके गलेमें जूतोंका हार पहनाया, इतनाही नही बल्कि खड़ा करके उन्हें उनके दो पुत्रों के साथ मारा गया । सकीना का भी यही हाल होता यदि महेशने उसे अपने घर लाकर नहीं रखा होता लेकिन महेश को इसके बदलमें अपनी जान गँवानी पड़ी । उस दिनसे सकीनाने किसी हिन्दू को फिरसे राखी नहीं बांधी । महेश का भाई रमेश उसकी राखी के लिए तड़पता रहा लेकिन हर साल वह एक राखी खरीदती और अपने बक्स में बन्द कर देती ।

इफ्फन और टोपी की दोस्ती दोनो के लिए महँगी सिद्ध होती है । टोपी को इफ्फन की पत्नी सकीनासे जोड़कर युनिवर्सिटी में अनर्गल बाते फैलाई जाती हैं । इफ्फन की एक हिन्दू से दोस्ती चर्चा का विषय बन जाती है और इफ्फनका प्रमोशन हाथसे चला जाता है तथा टोपी की स्कॉलरशिप बन्द हो जाती है ।

अन्ततः इफ्फन युनिवर्सिटी से इस्तीफा देकर बम्बू चला जाता है और टोपी की दुनिया उजड़ जाती है । जीवनमें एक सहारा था वह भी उठ गया । पिताके घर पैर न रखनेकी तो उसने पहलेही शपथ ला रखी थी । उसका व्यक्तित्व टूट गया । तीन टुकड़े बम्बू चले गये और चौथा टुकड़ा अलीगढ़ में रह गया । जीवन में उसकी कोई इच्छा पूरी नहीं हुई । उसने चाहा कि सकीना उसे राखी बांध दे तो वह बम्बू चली गयी । उसने चाहा कि सलीमासे उसकी शादी हो जाये तो अपना थीसिस, लिखवाकर सलीमाने मिर्जा साजिद मीं से विवाह कर लिया । उसने नौकरी चाही तो कहीं हिन्दू होनेके कारण नहीं मिली और कहीं मुसलमान होने के कारण । उसका जीवन केवल टुकड़ों में बिखरता ही गया । एक बात आश्चर्य कि उसने कभी किसीके साथ समझौता नहीं किया । जीवनसे टूटा हुआ निराश टोपी

किसीसे समझौता करनेसे बेहत्तर आत्महत्या करना पसंद करता है ।

<u>पात्र और चरित्र चित्रण --</u>

उपन्यासमें केवल तीन पात्र प्रमुख है ।

१) बलभद्र नारायण शुक्ला उर्फ " टोपी शुक्ला "

२) सय्यद जर्गाम मुरतुजा आब्दी उर्फ इफ्फन

३) सकीनाबानो (सकीना)

१) बलभद्र नारायण शुक्ला उर्फ " टोपी शुक्ला "

यह उपन्यास का प्रमुख पात्र है । उपन्यासमें टोपी शुक्ला का जीवन चरित्र ही चित्रित किया गया है । टोपी ने एक परम्परागत कर्मठ ब्राह्मण के घरमें जन्म लिया था । देखने मे वह कुरूप होने के कारण घर में उसका कोई लाड प्यार नहीं हुआ । बचपनमें माता पिता की झिडकियाँ और बडे भाईयोंकी उतर नहीं उसे पहनना पडती । बचपनमें ही उसकी दोस्ती इफ्फन नाम के एक सह पाठी से हो जाती है और संयोगसे अंततक बनी रहती है । इफ्फन के घर पर ही उसे वास्तविक माता पिता का प्यार मिला। इसीसे उसे इफ्फन की दादी अम्मा अपने घर की दादी अम्मा से नजदीक और प्रिय लगने लगी । घरका उपेक्षित बालक बलभद्र इस प्यार को पाकर घर और पाठशालामें पढाये गये मुस्लिम द्वेषको ~~भी~~ भूल गया । बनारसी वातावरण में पला हुआ बलभद्र अलीगढ मुसलिम युनिवर्सिटीसे स्कालरशिप प्राप्त करने की जिद में बनारसमें पढना छोडकर अलीगढ आता है । और यहाँपर उसकी अपने बचपनके दोस्त इफ्फनसे भेंट होती है। इफ्फन से मिलकर उसे और एक व्यक्ति मिल गया वह था इफ्फन की पत्नी सकीना । सकीनाने उसे भाई का प्यार दिया लेकिन मुस्लिम युनिवर्सिटीके वातावरणमें टोपी और सकीना को लेकर अनेक अफवाहें उडाई गई । इन बातों को झेलना कभी कभी टोपी के लिए असह्य हो जाती । टोपी के पास एक मानव का दिल है । इसलिए उसे हिन्दू-मुसलमानोंको लेकर हुई बातोंसे वेदना होती है । टोपी सकीना और इफ्फन की दोस्ती सभी के

लिए महँगी साबित होती है। इफ्फन साहब का प्रमोशन रोक दिया जाता है और टोपी की स्कालरशिप भी बन्द की जाती है। टोपी को घरसे पैसे मिलना भी बन्द हुआ था। ऐसेमें टोपी अपने शहर जाकर अपने भाई के विरोध में खड़े उम्मीदवाद का प्रचार करता है जिससे घरमें उसकी भर्त्सना होती है। टोपी कायमका घरसे बिदा लेता है। टोपी और इफ्फन में हिन्दू- मुसलमानों को लेकर बहसे होती और अंतत: दोनों भी उदास हो जाते हैं। टोपी का सारा जीवन एक तरहसे उपेक्षासे भरा है। वह नौकरी की तलाश करता है लेकिन कहीं तो हिन्दू होने के कारण कहीं अलीगढ का विद्यार्थी होने के कारण नौकरी नहीं मिलती। टोपी देश की यह अवस्था देखकर उदास हो जाता है।

उस का पूरा व्यक्तित्व तो तब बिखर जाता है जब इफ्फन इस्तीफा देकर जम्मू चला जाता है। उसके दिल के तीन टुकडे इफ्फन,सकीना और शबनम जम्मू चले जाते हैं और एक टुकडा अलीगढ़ में रहता है। तनहाई और अधूरेपन का जीवन जीते हुये। टोपी यहींपर निश्चय कर देता है कि वह अलीगढ़ छोड़कर नहीं जायेगा। जैसेही तनहाई की पीड़ा असह्य हो जाती है वह अपना जीवन अपने हाथों समाप्त कर देता है। पुलिस की तलाशी में दो खुले हुये लिफाफे मिलते हैं एक में सकीना का पत्र और भेजी हुई राखी है और दूसरेमें नौकरीका ऑर्डर। नौकरीका ऑर्डर मिलकर भी उसने जाना उचित नहीं समझा। वह जीवनसे समझौताही नहीं कर सका। टोपी का जीवन एक ऐसे व्यक्तित्व का जीवन है जो जीवनमें अपने फैसलेपर अटल रहा। वह न पितासे समझौता कर सका न भाईका प्रचार कर सका। सकीना और इफ्फन के अभावमें जैसे वह टूट गया।

इफ्फन --

टोपी शुक्ला के समान ही उपन्यासमें इफ्फन का भी महत्व है। इधर जिस तरह टोपी का घर परम्परावादी और मुसलमान विरोधी है उसी तरह इफ्फन का खानदान भी एक मौलवी का है और उसके दादा तथा नानी हिन्दुओंका छुआ नहीं खाते। किसी काफिर के हाथ का खाना वे हराम समझते हैं। मतलब

इफ्फन के मन पर भी हिन्दुओंके प्रति नफ़रत बचपनमें ही बोई गई थी । बचपनमें ही उसकी टोपी के साथ दोस्ती होती है । अलीगढ़ में टोपी मिलनेपर उसे भी खुशी होती है ।

टोपी और इफ्फन की या यों कहे कि एक हिन्दू और मुस्लिम की दोस्ती युनिवर्सिटी के लोगियों से देखी नहीं जाती और टोपी को इफ्फन की सकीनासे जोड़कर अफवाहें फैलाई जाती है । रास्तेमें ताने कसे जाते हैं । इफ्फन इन सभी बातोंको केवल अपने दोस्त कीखातिर झेलता रहा लेकिन जैसेही एक दिन टोपीपर इस्लाम को लेकर जानलेवा हमला हुआ, इफ्फनने निश्चय किया कि वह अलीगढ़ छोड़कर चला जायेगा । और एक दिन वह अपनी नौकरीका इस्तीफा देकर जम्मू चला जाता है । इफ्फन का व्यक्तित्व टोपी के समान नहीं है । समाज विरोधीतत्वों के सामने वह हार जाता है और जम्मू चला जाता है ।

स की ना --

उपन्यासमें सकीना का चरित्र एक विशिष्ट स्तरपर निर्माण हुआ है । सकीना को अपने पिता के समान देश और हिन्दुओंसे प्रेम था लेकिन जैसे ही बल्वेमें उसके गांधी भक्त पिताजीको उनके दो पुत्रों के साथ मारा जाता है उसका सभी बातों परसे विश्वास उठता है । जो सकीना कलतक पाकिस्तान के निर्माताओंको गालियाँ देती थी वही सकीना आज हिन्दुओंसे नफरत करने लगती है । महेशके बाद भाई रमेश को वह राखी नहीं भेजती ।

टोपी से वह हमेशा झगड़ती है लेकिन टोपी के लिए उसके दिल में भाईका प्यार है । वह इतनी निडर है कि टोपी और उसको लेकर उठाई गई अफवाहोंका उसपर तनिक भी असर नहीं होता । इतनाही नहीं वह तो खुले आम टोपी और इफ्फन के सामने इन बोलोंका मजाक किया करती है । इन बातोंसे परेशान होकर टोपी सकीनाको राखी बांधनेके लिए कहता है लेकिन वह कहती है - " यहाँ के मुल्लों से डरकर ? यहाँ की जमीला, अनीसा, कुदसिया आपाओं से डर कर ? यहाँ के डरपोक कम्युनिस्टों से डरकर ? मैं किसी हिन्दूको राखी नहीं

बांध सकती । तुम्हारे बाप डॉक्टर न मालूम कौन नीचे लेनेवाले ने तुम्हें घरसे निकाल दिया है । तुम्हारे भाईने इस घरमें " तुम्हारे लिए एक कमरा खाली कर दिया है । हिम्मत हो तो रहो हमारे साथ ।" [1] सकीना आजाद व्यक्तित्व की स्त्री है । उसका स्वभाव खुल खुला और सदाबहार है । वह हरदम टोपी को छेड़ती और उसके उर्दू उच्चारोंको सुधारती रहती है ।

हिन्दुओं द्वारा पिता और भाई की हत्या के अतिरिक्त उसके मन में महेश के भाई रमेश के लिए स्थान है । वह प्रतिवर्ष राखी तो नहीं भेजती लेकिन प्रतिवर्ष एक खरीद कर उसे अपने बक्स में बन्द कर देती है । जम्मू चले जाने के बाद टोपी को राखी भेजती है । उपन्यासमें उसका चरित्र अनूठा बन गया है ।

कथोपकथन --

" टोपी शुक्ला " राहीजीका अत्यंत सशक्त उपन्यास है । इस उपन्यासके संवाद बेजोड़ है । उसमें प्रवाह है, मिठास और जिन्दगीकी कड़वाहट भी । व्यक्तिके अंतरमनकी कड़ुवाहटको, दुःख और विषादको राहीने सही शब्दोंमें और सही वाक्योंके द्वारा व्यक्त किया है । उपन्यासमें ऐसे कई संवाद है जो उपन्यासकी कथा को तो आगे बढ़ाते है लेकिन साथही पाठकों के मन में एक अनुभूतिकी कसक भी पैदा करते है । रमेश का लड़ाई के मैदान से सकीना को पत्र आया है --
" सुकन मेरी बहन । मै लड़ाई के मैदान में हूँ । पता नहीं क्या होनेवाला है । .... मै अकेला हूँ क्योंकि मेरेपास तेरी राखी नहीं है । तू इतना क्यो बदल गयी सुकन ?[2] "
और ..

" अरे मुझे दिखाओ उस दाढ़ी-मुँहे को ।"

" वह दिल्ली चले गये है ।"

" क्यो ? "

" उन्होंने रिजाइन कर दिया है ।

---

१. टोपी शुक्ला - राही मासूम रजा - पृ.सं.११० ।

२. टोपी शुक्ला - राही मासूम रजा - पृ.सं.११० ।

" भाई को मैं इतना डरपोक नहीं समझता था । " टोपी रो पड़ा ।

इस तरह के अनेक संवेदनशील संवाद इस उपन्यास में भरे पड़े हैं । ऐसे संवादों में इफ्फन टोपी का विचार मंथन है, "लड़ाई झगड़ा है," शबनम की तोतली बोली है, दिल की कसक है और पूरी उत्पन्न व्यवस्था के प्रति चोट भी ।

<u>भाषा शैली</u> --

इस उपन्यास की भाषा में " आधा गाँव " की तरह अक्खड़पन नहीं है । भाषा में ठेठ हिन्दी और उर्दू का मधुर मिश्रण हुआ है । मुस्लिम लेखक होने के कारण उर्दू शब्दों का आधिक्य रहना स्वाभाविक है । उपन्यास हिन्दू - मुसलमानों के शब्दों को लेकर चलता है, जिस के कारण मुस्लिम पात्र जैसे इफ्फन, सकीना उर्दू बहुल भाषा का प्रयोग करते हैं। लेकिन उर्दू की यह अधिकता पाठकों के लिए दुर्बोधता का कारण नहीं बनी है । भाषा में प्रवाह और कसाव आ गया है । पात्रों के भावों को व्यक्त करने में भाषा पूरी तरह सफल हुई है । अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग खुले आम हुआ है । इसके कारण भाषा की स्वाभाविकता में कोई अंतर नहीं आया है ।

इस उपन्यास में राही साहब ने पात्रों को सीमित रखने की चेष्टा की है, लगता है " आधा गाँव " में जो पात्रों का जंगल खड़ा किया गया था वह यहाँ वीरान बन गया है । गालियों का प्रयोग बिल्कुल नहीं बल्कि पूरा उपन्यास स्वयं एक गाली बन गया है ।

राही साहब के मन में हिन्दू-मुसलमानों के संबंधों को लेकर शायद कुछ खौल रहा था जिसे उन्होंने टोपी शुक्ला, इफ्फन और सकीना इन पात्रों के माध्यम से शब्द बद्ध किया है ।

शिल्प --

पूरा उपन्यास अठारह अध्यायोंमें विभाजित है और एक सौ एकसठ पृष्ठोंमें पूरा किया गया है। इस दृष्टिसे इसे एक लघु उपन्यास कहा जा सकता है। उपन्यासके बीच बीच में घुसकर बयान देने की प्रवृत्ति इस उपन्यासमें भी देखनेको मिलती है। लेखक की आंतरिक झौंझलाहट व्यक्त करने के लिए जैसे उपन्यास के पात्र लेखक को अपर्याप्त लगते हैं। इस प्रवृत्तिके कारण उपन्यास की स्वाभाविकता आहत हुई है। बीच बीच में स्पष्टीकरणात्मक ब्यौरे देने की प्रवृत्ति भी इस उपन्यासमें देखने को मिलती है। लेखक इफ्फन और सकीना का जीवन परिचय इसी तरहसे देता है। कहीं कहीं पर इस प्रवृत्तिके लिए लेखकने पाठकों की क्षमा भी माँगी है।

निष्कर्ष --

देश विभाजन के बाद उत्पन्न हिन्दू - मुसलमानों की मानसिकता दर्शाने के लिए लेखक ने टोपी शुक्ला का चरित्र चुना है और अपने इस उद्देश में लेखक बहुत अंशोंतक सफल भी रहा है। टोपी जैसे व्यक्ति हमें भारत के हर भागमें देखने को मिलेंगे। आज हिन्दू और मुसलमानोंमें शक, डर और नफरत का वातावरण देखने को मिलता है। हिन्दू - मुसलमानों पर शक करता है और मुसलमान, हिन्दुओंको नफरत की निगाह से देखकर डरकर जाता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के ३५ वर्षों के बाद भी इस वातावरण में कोई विशेष फरक नही पड़ा है।

(३) हिम्मत जौनपुरी --

राही मासूम रजा का तीसरा हिन्दी उपन्यास मार्च सन् १९६९ में " हिम्मत-जौनपुरी " के नामसे प्रसिद्ध हुआ । लेखक का यह एक चरित्रात्मक लघु उपन्यास है, जिसमें हिम्मत जौनपुरी नाम के बहुत ही साधारण व्यक्ति का जीवन चित्रित किया है । इस उपन्यास की विशेषता यह है कि यह एक व्यक्तिका जीवन चरित्र होते हुये भी इसमें किस्सा गोई शैली में आजके भारतीय जीवनके सन्दर्भ में मुस्लिम समाज के संस्कारों के अन्तर्द्वन्द्वका चित्र प्रस्तुत किया है । उपन्यास के करीब करीब आधे पृष्ठ हिम्मत जौनपुरी के पुरखोंका इतिहास और उनसे सम्बन्धित घटनाओंको चित्रित करने में खर्च हुये हैं ।

कथानक --

लेखक ने हिम्मत जौनपुरी के चरित्र को ठीकसे समझाने के लिए कथा को उसके परदादा शेख शुजाअली " दिलगीर " जौनपुरीसे आरंभ किया है । हिम्मत जौनपुरी वास्तवमें गाजीपुरके थे । कई सौ बरस पहले उनका खानदान जौनपुर आकर बस गया था लेकिन वे अभी भी अपने को गाजीपुरी समझाते और यह साबित करने के लिए अपने लड़के लड़कियोंका विवाह गाजीपुर जाकर करते थे । यह परम्परा दिलगीर जौनपुरी से टूट गयी । उन्होंने गाजीपुरकीही लड़कीसे प्रेम किया और उसकेही विवाह किया । उनके पिता ने पुत्र के इस विवाहपर उसे घरसे निकाल दिया । दिलगीर जौनपुरी बड़े कवि थे और उन्होंने " मसनवी दरबयाने इश्को-राधो-सीता" लिखी । उन्हें दो पुत्र हुये, शेख कुबाहनल्लाह " अर्क " जौनपुरी और शेख अरूकुल्लाह " आरजू " जौनपुरी । आरजू जौनपुरीने गाजीपुरकेही मकान टैलर की लड़की सकीना उर्फ सुक्कन से इश्क किया और दिलगीर साहब को मनमसोसकर सकीना को ब्याहकर लाना पड़ा । लेकिन इसके बाद उन्होंने आरजू से बोलनाही बन्द किया । उनकी यह आदत थी कि वे अपनी पत्नी को कभी मायके नहीं जाने देते थे । इतनाही नहीं पत्नीके घरवालोंका नामतक अपने घरमें निकालने नहीं देते थे । इस कारण मियाँ बीवी में हमेशा तू मैं मैं होती । एक

दिन बदहाल इतनी बढ़ गई कि बुढ़ापेमें उन्होंने बेगम को तलाक दे दिया । घर में सन्नाटा छा गया । आरज़ू चुप न रह सका तो उन्होंने उसे भी घरसे निकाल दिया । बेगम तलाक के सातवे दिन मर गयी । आश्चर्य की बात यह कि दिलगीर साहब भी उसी दिन मर गये ।

आरज़ू जौनपुरी को सकीना को एकही पुत्र हुआ शेख सलामत अली " नादीर " जौनपुरी । नादीर जौनपुरी को शायरी का शौक था । जैसेही नादीर जवान हुये उन्होंने एक तवायफ की लड़की इमामबाँदी से प्रेम करना शुरू किया । यह बात आरज़ू साहबसे छिपी न रह सकी । उन्होंने नादीर को इस हरकत के लिए खूब पीटा और घरसे निकाल दिया । नादिर जौनपुरी ने दूसरे दिन इमाम बाँदीसे विवाह किया और बड़ी मस्जिद के पिछवाड़े एक घर एक रुपया महीना किरायेपर लेकर जीवनभर वहीं रहे । इस बात को लेकर आरज़ू जौनपुरी को जलील करने के लिए उनके बड़े भाई अर्श जौनपुरी ने एक नई चाल चली । वे नादिर के घर गये । उनसे हमदर्दी जताई । यह बात आरज़ू साहब और उनकी पत्नी सकीना को भी मालूम हुई । सकीना अपने बेटेके लिए तड़पती रही थी । वह आरज़ू साहबसे झगड़ाकर नादिर के घर आ गयी । अर्श जौनपुरी को तो यह अच्छा मौका मिला । उन्होंने सकीना को फुसलाकर आरज़ू साहबपर मेहर का दावा दाखल करवाया । आरज़ू साहब के वकीलने सकीना के अंगूठे के निशान वाले पुराने कागज निकाले, जिसपर सकीनाने मेहर माफ कर दिया था । सकीना मुकदमा हार गयी लेकिन आरज़ू साहबने पांच रुपये प्रतिमाह पेन्शन देना शुरू किया । इसके बाद वे तीन महीने मेंही गुजर गये । उन्होंने अपनी वसीयतमें लिखा था कि उनके जनाजे में अर्श और नादिर शामिल न हों । इधर जनाजा बाहर निकल रहा था और पीछे के दरवाजे से अर्श जौनपुरी भाई के घर का कब्जा ले रहे थे । नादिर जौनपुरी ने भी घरपर कब्जा करना चाहा लेकिन चाचा अर्श जौनपुरी के सामने कुछ न चल सका । नादिर हताश होकर अपने पुराने घर वापस आये । इसी छोटे घरमें हिम्मत जौनपुरी का जन्म हुआ, जो इस कथा का नायक है ।

हिम्मत जौनपुरी का पूरा नाम था, शेख मुबारक अली "हिम्मत" जौनपुरी । बचपन से लेखक का हिम्मत से पहचान और दोस्ती थी । हिम्मत कुछ खास व्यक्तित्व

लिए छुये नहीं था । उसे खेल तो बहुतसारे प्रिय थे लेकिन एक भी खेल वह नहीं खेलता था । केवल खेल के मंजिल देखकरही वह खुश होता था । सातवी कक्षा में सेही हेडमास्टर मौलवी अब्दुल हफीज ने उसे स्कूल से निकाल दिया । हिम्मत को शायरी करने का और गाने का शौक था । उसकी दो इच्छाएँ बडी जबरदस्त थी । एक अर्श जौनपुरी के " दर्दे नव बहार किस्से - रामो - लीला " और " गौहरे आबदार " उर्फ करबला कथा को छापने की तथा दूसरी बम्बई जाकर लीला चिटणीस से प्रेम करने की । जैसे ही वह ग्यारह साल का हुआ वह अपने सपनों को पूरा करने के लिए बम्बई आ गया ।

बम्बई आने के बाद उसे पहली बार जीवन की वास्तविकताओंने झकोर दिया । बम्बईमें वह दरदर भटकता, रस्तेपर लोगोंको इकट्ठा करके दात का मंजन बेचता - और फिल्मी कहानी लिखने का स्वप्न देखता । एक दिन बम्बई के रस्तेपर मंजन बेचते हुये लेखक की उसकी मुलाकात हुई । लेखकको उसने अपनी फिल्मी कहानी सुनाई, उसकी नायिका जुबेदा का गुणगान किया और उसपर एक कहानी लिखनेका आग्रह किया । जुबेदा उर्फ जमुना से उसकी मुलाकात ऐसेही फुटपाथपर मंजन बेचते हुये हुई थी । जुबेदाने ही उसे गफ्फार बाबा के चायखानेपर लाया था । गफ्फार खाँ गाजीपुरके ही थे और एक बार सुलोचना पर आशिक होकर बम्बई आये थे । सुलोचना तो नहीं मिली लेकिन चायकी केटली हाथ में पड़ गयी । अब पैसे बचाकर हज जानेका और बादमेंही गाजीपुर लौटने का उनका विचार था । गफ्फार बाबा के इस्लामी होटल मेंहिम्मत का घर और फिल्म कंपनी का दफ्तर बन गया । हिम्मत दिनभर मंजन बेचता और शाम होटलपर बैठकर वहाँ के दादाओंको अपनी फिल्म स्क्रिप्ट सुनाना ।

जुबेदा को वह अपनी फिल्म में नायिका का रोल देना चाहता था । वह जुबेदा भी बड़ी कला की लड़की थी । दिनरात अपना बदन बेचती फिरती । हिम्मत जमुना (जुबेदा) पर आशिक हो गया था । हिम्मत को जमुना का जुबेदा बनना पसंद नही था, लेकिन जमुना को धन्दे के लिए यहीनाम उपयोगी लगता । उसने एकदिन हिम्मत करके जमुना से कहा कि वह यह धन्दा छोड दे, लेकिन जमुना का कहना था कि वह गाढे पसीनेकी कमाई खाती है । उसके पास बेचने के लिए

कुछ न कुछ है लेकिन उसके पास बेचने के लिए केवल बदन है ।

बम्बई आकर हिम्मत की कोई इच्छा पूरी नहीं हुई । मस्नवियोंको तो उसने छपवाया लेकिन एक दिन उसे दीमक चाट गये । लैला चिरागी का सपना तो बम्बई में पैर रखतेही खत्म हुआ । जमुनासे उसने प्यार माँगा, उसे अपने मन की हीराइन बनाना चाहा, उसे गाजीपुर लेजाकर घर बसाना चाहा लेकिन उसने जवाब दिया," तू तो पागल है । जमुना चौडबन्दर रोड है हिम्मत । ऐसी बड़ी सड़क तेरे घरमें कहाँसे समाएगी भला ? "[1] और वह उसके गाल थपथपाकर चली गई ।

हिम्मत जीवन से निराश हो गया, उसके सपनों के टुकड़े, टुकड़े हो गये । उसके सारे सपने मर गये । वह सपनोंकी नगरी बम्बई में अपने सपनों को लेकर आया था लेकिन आत्मा की तलाश और सपनों के संघर्षमें उसका शरीर काम आगया । वह अपने सपनों के नगर बम्बई में एक चाकू से मारा गया । मरने के पहले उसके हाथों में गाजीपुरके दो टिकट थे, जो उसने एक अपने और एक जुबेदा के लिए खरीदा था । जुबेदाके गाजीपुर चलनेसे इन्कार करनेपर वह उन दो टिकटोंको लेकर " दो टिकट गाजीपुर " नाम से चिल्लाता रहा और उसकी दशा पागल के समान हो गई थी ।

पात्र और चरित्र चित्रण --

"हिम्मत जौनपुरी " एक चरित्रात्मक उपन्यास है और इसमें हिम्मत जौनपुरी की कथा कहना लेखक का प्रमुख उद्देश्य रहा है । जिसके लिए लेखकने प्रारंभ में हिम्मत के खानदान से पाठकोंको अवगत कराया है । पूरा उपन्यास हिम्मत को केन्द्र मानकरही लिखा गया है । वह ही इस उपन्यास का प्रमुख पात्र है । अन्य पात्र प्रसंगवश उपन्यास की कथा बढ़ाने के लिए आते है और चले जाते है ।

---

१. हिम्मत जौनपुरी - राही मासूम रजा - पृ.सं.१२६ ।

(१) हिम्मत जौनपुरी --

हिम्मत जौनपुरी वैसे गाजीपुरकाही रहनेवाला है । उसके परिवारमें विवाह सम्बन्धोंको लेकर पुत्रोंको घरके बाहर कर देना और छोटी मोटी बातोंपर बीबियों को तलाक देना जैसी परम्पराही बन गई है । हिम्मत जौनपुरी के पिता नादीर जौनपुरी को भी एक तवायफ की लड़की से विवाह करने के कारण उनके पिताने घरसे हकाल दिया था । परिणामतः हिम्मत के पिता को बहुत साधारण परिस्थितिमें एक छोटेसे घरमें अपना जीवन बिताना पड़ा । इसी छोटे घरमें हिम्मत का जन्म हुआ । पूरा नाम रखा गया " शेख मुबारक उर्फ "हिम्मत जौनपुरी " सातवी कक्षा में उसे स्कूल से निकाल दिया गया । शायरीकरने और मेलोंके मंवेस देखनेका बचपन में शौक रहा । जवान होते ही फिल्मी दुनियाने आकर्षित किया, लीला चिटणिस पर आशिक हुआ और बम्बई दौड़कर आ गया ।

बम्बई आतेही उसे मालूम हुआ कि उसके सारे सपने झूठे हैं, परछाईं मात्र है । लेकिन बम्बई आया तो वह यहीं रुक गया । गाजीपुर तो वह कभी भी जा सकता था और इस " कभीभी" इस कमीने शब्द के चक्कर में पड़करही वह फिर कभी गाजीपुर लौट नहीं सका ।

दिनभर दन्त मंजन बेचता और शाम को गफ्फार बाबा के चाय खानेपर बैठकर सभी ग्राहकोंको अपनी जिन्दगी की कथा सुनाता । देह बेचनेवाली जमुना उर्फ जूलेखा से उसे प्यार हो गया था लेकिन उसने उसे पागल समझकर उसका साथ देना मंजूर नहीं किया । उसने सारी हिन्दी फिल्में देखी थी और सभी की कहानियाँ उसे जबानी याद थी । लेकिन उसे यह नहीं मालूम था कि हिन्दुस्तानी फिल्मोंकी कहानियोंका वास्तविक जीवनसे कोई सम्बन्ध नहीं होता । उसने लेखकसे मिलकर उसके जीवनपर एक फिल्मी कथा लिखनेका भी आग्रह किया था । अन्ततः जीवनसे वह बहुतही निराश होता है । उसकी अवस्था पागल के समान होती है । एक दिन बम्बईमें बससे टकराकर उसकी मृत्यु हो जाती है ।

हिम्मत का चरित्र एक ऐसे युवक का चरित्र है जो हिन्दी फिल्मे देखकर

ऊंचे ऊंचे सपने देखता है और नाहक अपने जीवन को बर्बाद करता है। बम्बई की फिल्मी दुनिया के पीछे पागल होकर अपने जीवन को बर्बाद करने वाले अनेक युवक हमें देखने को मिलेंगे । लेखक ने हिम्मत जौनपुरी के सपनों के टुकडोंको जमा कर हिम्मत की चरित्रगत विशेषताओंपर प्रकाश डाला है। हिम्मत स्वभावसे अत्यंत संवेदनशील है। जुबेदा को वह अपने सपनोंकी मलिका बनाना चाहता है। उसका खुलेआम शरीर बेचना उसे बिलकुल पसंद नहीं है। जुबेदा उसके प्यारका मजाक उडाती है, उसे अत्यंत भोला और पागल समझती है। जुबेदा के इस व्यवहारसे उसके संवेदनशील मन को ठेस लग जाती है और वह अपने पागलपनके दौरमें मर जाता है। हिम्मत का दुखद अंत देखकर पाठक के मन में एक टीस उत्पन्न होती है। लेखक हिम्मतके चरित्रको उभारणेमें सफल रहा है।

कथोपकथन

लेखक ने यह उपन्यास किस्सागोई पद्धतिमें लिखा है। लेखक हिम्मत जौनपुरी के जीवन और परिवार के सम्बन्धमें किस्से कहते जाता है और बीच बीच में प्रसंगानुरूप संवादोंको रख देता है। उपन्यास का प्रारंभिक अंश हिम्मत के परिवारसे संबंधित है। गाजीपुरके ऊंचे खानदान में खडीबोली सदायफों की बोली समझी जाती है। इस लिए मुसलमान परिवार के सदस्य घरमें अपनी परम्परागत बोलीकाही उपयोग करते हैं। लेखकने हिम्मत के परिवार के सदस्योंके मुँहमें इसी बोली को रखा है, जिसके कारण गाजीपुर के मुस्लिम घरानोंका सही चित्र उपस्थित हो सका है। उपन्यास के संवाद घटनाओं को अधिक रोचक बनाते हैं। एक उदाहरण देखिए - "हुक्कन को गुस्सा आ गया।" आपो अपने अब्बाकी मर्जी के खिलाफ बिहा न किहिन रहा।"

" मैंने किसी रंडी से ब्याह नहीं किया था।"

" अगर अल्ला न करे हम रंडी रहे होते तो ?"

" बेहूदा बात न करो "

"अच्छा . . . . इ तोहरा घर है। तू नद्दू को हियाँ मत बुलाओ। बाकी हम आज जा रहे अपने बेटेसे मिले।"

" अगर तुम वहाँ गईं तो मैं तलाक दे दूँगा ।"[१]

इस तरहके चुटीले संवादोंका लेखकने बड़ी खूबीसे उपयोग किया है। बम्बईके जीवन का चित्रण करते समय पात्रों के संवाद हिन्दी फिल्मों के संवादोंके समान लगते हैं। इन संवादोंके द्वारा हिम्मत और जमुना के व्यक्तित्व को लेखकने अच्छी तरह उभारा है। जमुना और हिम्मत के बीच चल रहे संवाद का एक नमूना देखिए --

" तूं सी-आइ.डी. हो का ? हिम्मत ने डरते डरते सवाल किया ।
जमुना खिल खिलाकर हँस पड़ी ।
" इ दादा है।"
" का है " हिम्मत ने हैरान होकर पूछा ।
" दादा ।" जमुना बोली
" हट झूठी कहीं की ।" हिम्मत ने कहा ।
" दादा त बुड्ढे होते है ।" सब हँस पड़े । हिम्मत घबरा गया : बोला
" अल्ला कसम " . . . . . अरे टार्जन बोल न हरामी से कि रोटी
खाये । कसम खाये से पेट नहीं भरता ।"[२]

कथोपकथन पात्रानुकूल हैं और वे उपन्यास की कथा को आगे बढ़ाने में समर्थ हैं। संवाद न अधिक लंबे हैं और न अधिक छोटे। इनमें चुलबुलापन स्वाभाविकता और भावोंको व्यक्त करनेकी क्षमता है।

भाषा और शैली --

लेखक का हिन्दी भाषापर अच्छा अधिकार है। भाषा उर्दू बहुल होते हुये भी उसमें प्रौढ़ता देखने को मिलती है। उपन्यासमें चित्रण परा मुस्लिम समाज और बम्बई की फिल्मों हिन्दीसे प्रभावित लोगोंका होने के कारण उर्दू शब्दोंको

---

१. हिम्मत जौनपुरी - राही मासूम रजा - पृ.सं.६७ ।
२. हिम्मत जौनपुरी - राही मासूम रजा - पृ.सं.११८ ।

अधिकता असली नहीं है । बम्बई में बोली जानेवाली हिन्दी ने अपना एक अलगही दर्जा कायम किया है । उपन्यासमें इस भाषा का उपयोग ठीक तरहसे हुआ है । गाजीपुरमें मुस्लिम परिवारोंमें खड़ी बोली नहीं बोली जाती । लेखकने यहाँपर भोजपुरी का उपयोग कर पात्रों को वास्तविक चेहरे प्रदान किये हैं । उपन्यासकी भाषा में प्रवाह और चुटीलापन है। उसमें बीच बीचमें हास्य-व्यंग्य की बौछारे भी हैं । बम्बईमें आकरभी हिम्मत भोजपुरी का उपयोग करता है और जमुना बम्बइया हिन्दी का उपयोग करती है । जमुना के मुँह के इशिक-डशिक, झोला झाकड़, इमरी,तुमरी जैसे शब्द उसके व्यावसायिक व्यक्तित्व को उभारते हैं ।

शैली --

उपन्यास किस्सा गोई पद्धतिमें लिखा गया है । लेखक अपनी प्रवृत्ति के अनुसार एक एक किस्सा सुनाता है, आवश्यकतानुसार उसमें संवाद जुड़ता है और उपन्यास आगे बढ़ता है । आदत के अनुसार लेखक बीच बीच में स्वयं उपस्थित हो जाता है । वह उपन्यासकी टूटी हुई श्रृंखला को वक्तव्य देकर जोड़ देता है । उपन्यास में वर्णन शैली की प्रधानता है । उपन्यास का प्रारंभिक अंश जिसमें लेखकने हिम्मत के पूरे खानदान का,विशेष रूपसे उसके दादा और परदादाका जो वर्णन किया है उसमें वर्णनात्मकताही प्रधान है । उपन्यास के इस अंश में हिम्मत के खानदान की कुछ विशेषताओं को दर्शाना लेखक का उद्देश्य रहा है । परिवारके सदस्योंका आपसी सम्बन्ध स्पष्ट करने के लिए लेखकने प्रारंभ में उनका वंश वृक्ष भी दिया है ।

शिल्प --

शिल्प की दृष्टिसे यह एक लघु उपन्यासही है । उपन्यास मुख्यत: तीन अध्यायोंमें विभाजित है । पहला अध्याय हिम्मत के पुरखोंका इतिहास बताने में खर्च किया गया है । यह इतिहास हिम्मत के परदादा से दिलगीर जौनपुरी से आरंभकर हिम्मत तक आकर रुक जाता है । उपन्यास के कुछ एकसौ सत्ताईस पृष्ठोंमेंसे

नब्बे पृष्ठ केवल इसके लिए ही खर्च किये गये हैं। हिम्मत का वास्तविक चरित्र तो केवल सैंतीस पृष्ठोंमेंही समाप्त होता है। आरंभिक कुछ पृष्ठोंमें पाठकोंको उकताहट होती है। उपन्यासकी कथा तभी कुछ पकड लेती है, जब हिम्मत का जीवन प्रारंभ होता है। उपन्यासकारने किसी नई पद्धतिको न अपनाकर अपनी प्रिय किस्सागोई पद्धति कोही अपनाया है। जहाँ जहाँपर उपन्यासकार स्वयं उपन्यासमें घुस आया है वहाँ उपन्यासकी स्वाभाविकता आहत हुई है और पाठक ऊब जाता है। विशेषत: पहले अध्यायमें पाठक पात्रों के जंजालमें इतना उलझा जाता है कि किसी एक पात्र का विशिष्ट प्रभाव पाठक के मनपर नहीं होता। वास्तविकता यह है कि लेखक का इस अध्यायमें कुछ उद्देश्य भी नहीं है। मुस्लिम समाज के विशेषत: जौनपुरी परिवारों की मानसिकता, उनकी विशेषताएँ बताना लेखक का उद्देश्य रहा है। अंतिम अध्याय में हिम्मत की अनपेक्षित मृत्यु के साथ उपन्यास समाप्त हो जाता है। यहाँ पर लेखक हिम्मत की विमनस्क अवस्थाका चित्रण अधिक गहराईके साथ कर सकता था। केवल जुबेदा के इन्कार के साथ हिम्मत का मानसिक संतुलन बिगड जाता और उसका बससे टकराकर मर जाना इन सारी बातोंको केवल एक पेज के अन्दर लेखकने समेट लिया है।

उ द्दे श्य --

"हिम्मत जौनपुरी " एक चरित्रात्मक लघु उपन्यास है। इस उपन्यासके माध्यमसे लेखक ने गाजीपुर स्थित जौनपुरी मुस्लिम परिवार के संस्कारों, अन्तर्द्वन्द्वों और उनकी मानसिकता को चित्रित करना तथा जौनपुरी परिवार के हिम्मत की कहानी कहना लेखका उद्देश्य रहा है। उपन्यास के पहले अध्यायमें जौनपुरी परिवारोंके लोगोंकी मानसिकता, उनकी आदतें तथा स्वयंको तीन चार पीढ़ियोंके बाद भी " जौनपुरी " ही साबित करने की उनकी ललक आदिका चित्रण करनेमें लेखक सफल रहा है। दूसरे और तीसरे अध्यायमें हिम्मत का जीवन चित्रित किया

है । हिम्मत के चित्र में लेखक ने पूरा न्याय नहीं किया है । हिम्मत के जीवन के अंतिम क्षणोंको लेखकने जल्दी समेटनेकी कोशिश की है । हिम्मत के जीवन चरित्र के साथ बम्बई की फिल्मी दुनिया की चकाचौंधसे आकर्षित अब्दुल बाबा और जुबेदा तथा उनके दादीओंका भी प्रसंगवश ठीक चित्रण हुआ है ।

निष्कर्ष --

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि लेखक का यह उपन्यास एक सामान्य कोटि का उपन्यास है । इसमें लेखकीय विशेषता: विशेषरूप से उभरकर नहीं आई है । मुसलमान परिवार की मानसिकता और अन्तर्द्वन्द्व ठीक तरहसे चित्रित हुए हैं । हिम्मत का चरित्र भी अपनी जगहपर ठीक से चित्रित हुआ है । लेखक उसे अधिक प्रभावशाली ढंगसे चित्रित कर सकता था । हिम्मत के जीवन का करुण अन्त देखकर पाठक के मनमें उसके प्रति अनुकंपा की भावना उत्पन्न होती है । बम्बई की वास्तविकताएँ भी ठीक तरहसे सामने आई हैं ।

(ई) ओस की बूँद --

राही मासूम रजा का चौथा हिन्दी उपन्यास " ओसकी बूँद " १९७० में प्रकाशित हुआ । हिन्दू मुसलमानों को सही परिप्रेक्ष्य में देखने का प्रयास लेखकने इस उपन्यास में किया है । देश विभाजन के बाद भारतीय जनता को तीन शब्द विरासत में मिले हैं -- शक, डर और नफरत । पाकिस्तान के निर्माण के बाद ये तीन शब्दही बोये और काटे जारहे हैं । लेकिन परम्परासे प्रेम और सौहार्द के साथ रहते आये हुये हिन्दू और मुसलमानों के दिलों के तहमें एक और प्रेम का झरना बह रहा है । आज भी देशमें वजीर हसन और दीनदयाल जैसे लोग देखने को मिलते

है जिन्हे अपना घर - हिन्दुस्तान - नफरत, शक और डर इन शब्दोंसे महान और ऊंचा लगता है। यहीं आकर हिन्दू मुसलमानों का भेद समाप्त हो जाता है। मुसलमान अपनी कट्टर धर्मान्धता भूलकर अपनी दोस्ती के लिए जान देने के लिए तैयार रहता है और हिन्दू अपना हिन्दुत्व भूलकर मानवता के धरातलपर एक हो जाता है। लेखकने इस उपन्यास द्वारा हिन्दू मुसलमानोंके सांप्रदायिक झगडों के बीच सच्ची इन्सानियत की तलाश की है और साथही देशमें बार बार हो रहे बलवोंके कारणोंका पता भी लगाया है। यह उपन्यास एक शहर - गाजीपुर और एक धर्म इस्लाम से संबंधित होते हुये भी हर शहर और हर धर्म का है।

कथानक

" ओस की बूँद " की कहानी हिन्दू-मुसलमानों के मानसिकताको व्यक्त करती है। देश को अभी अभी आजादी मिल गई है और हर एक अपने को कांग्रेसी और देशभक्त सिद्ध करने की होड में लगा हुआ है। गाजीपुरभी इसमें पीछे नहीं है। हयातुल्ला अन्सारी जो पहले मुस्लिम लीगी थे और मुस्लिम ॲंग्लो वर्नाकुलर हाईस्कूल के अध्यक्ष थे, अब गांधीभक्त बन गये हैं। उन्होंने अपने हाईस्कूल का नाम बदलकर " मुस्लिम ॲंग्लो हिन्दुस्तानी हायर सेकंडरी स्कूल " रख दिया है। वजीर हसन भी पहले मुस्लिम लीगी थे, लेकिन उन्होंने अभीतक अपनी टोपी नहीं बदली थी। वजीर हसन और हयातुल्ला अन्सारी दोनोंने मिलकर पाकिस्तान के लिए जोर शोर से भाषण दिये थे लेकिन पाकिस्तान बनने के बाद दोनो भी पाकिस्तान नहीं गये। हयातुल्ला अन्सारी कॉंग्रेसी लीडर बन गये और वजीर हसन ने कहा कि वे अपना घर छोडकर पाकिस्तान क्यों जाऊँ ? जब उनके बड़े बेटे अलीबाकरने पाकिस्तान जाने की जिद की, तो उन्होंने उसकी आंखोंमें शंकों डालकर कहा, " मैं एक गुनहगार आदमी हूँ और इसी दर जमीनपर मरना चाहता हूँ, जिसपर मैंने गुनाह किए है।"[1] उन्होंने अपने बेटे को समझाया कि वे जो दीनदयाल है वे उनके लंगोटिया यार हैं। वे यदि बदल जायेंगे तो वे कौनपर भरोसे

---

1. ओस की बूँद - राही मासूम रजा - पृ.सं.१० ।

रहेंगे और यहाँपर दीनदयाल अधूरा रहेगा । वे एक दूसरेको छोड़कर, अपनी जन्मभूमि और घर को छोड़कर रह ही नहीं सकते । कबीर हसनके लिए हिन्दुस्तान उनका अपना घर था और घर मजहब और मुल्क दोनों से ऊँचा होता है । उनके लिए मुल्क एक बहुत छोटा शब्द है । भाषा इतनी छोटी है कि उसकेपास उससे बड़ा शब्द नहीं है । यह सब देखकर कबीर हसनकी आत्मामें एक तूफान आया था, लेकिन अलीअकबर को इस तूफान का ज्ञान नहीं था, क्योंकि उसे अपने बुजुर्गों से परम्पराएँ नहीं मिली थी, केवल एक सियासी नारा मिला था " पाकिस्तान जिन्दाबाद" । कबीरहसन को अपने बुजुर्गोंसे हजारों बरसकी परम्पराएँ मिली थी । वे वास्तवमें मानवतावादी और आदर्शवादी थे । पाकिस्तान की बात किसीके दिमाग में आनेसे पहलेही उन्होंने अपने घर के बाजूमें स्कूल के लिए जमीन दी थी । उसकी इमारत बनवानेमें हिस्सा लिया था । वास्तवमें कबीर हसन के दो बेटे थे । बड़े बेटे का नाम था " मुस्लिम पब्लिक ग्रामर स्कूल और छोटे बेटे का नाम था " अलीअकबर खाँ " । बड़े बेटे ने अपना नाम बदल दिया और छोटा बेटा पाकिस्तान चला गया । कबीरहसन अपनी पुरानी बस्तीमें अकेले रह गये ।

दीनदयाल और उनकी दोस्ती पहले जैसे ही थी लेकिन मुलाकातें जरा कम होती थी । सन १९२१-२२ से अलगाव शुरू हुआ और सन १९४७ तक आते आते दोनों के दो अलग रास्ते बन गये । दोनोंकी कभी कभी चाय की दुकानपर भिड़न्त होती । बहसें छिड़ती, कबीरहसन कहते कि हिन्दुस्तानी मुसलमानों को भी उतनाही हक है जितना हिन्दुओंको जीने के लिए अलग देश और बना जाता है । बात दोनों की सही होती ।

इसी समय नगर पालिका के चुनाव लग गये । दीनदयाल चुनाव लड़कर चेअरमन बनना चाहते थे । लेकिन उन्हें टिकट नहीं मिला । टिकट इयातुल्ला अन्सारी को मिला । परिणामतः दीनदयालजी स्वतंत्र के टिकट पर खड़े रहे । इस चुनाव में रामअवतारने दीनदयालजीके विरोधमें प्रचार किया और दीनदयालने उसी दिन रामअवतार को घरसे बाहर निकाल दिया । रामअवतार एक पुराने मंदिरमें

रहने लगे जो मुसलमानों की बस्तीमें था । एक दिन रामअवतारने सुबह ही मंदिरमें शंख फूंका और पूरा मुस्लिम मुहल्ला मंदिर के बाहर में एकत्र हुआ । मुस्लिमोंने तय किया कि इस मुहल्लेमें शंख नहीं बज सकता । शहर के मुसलमान जिहाद के लिए सरसे कफन बाँधने लगे । इधर दीनदयाल के नेतृत्व में हिन्दुओंका एक जुलूस मंदिरमें पूजा के लिए आ गया । रामअवतारको यह अपेक्षित नहीं था । उसने शंख पास के कुएँमें फेंक दिया ।

वास्तवमें यह मंदिर अलीरहमान की हवेलीमें था और उनके कब्जेमें था । उस मंदिर के पुजारीका वेतन भी अलीरहमानसेही दिया जाता था । परिणामतः अलीरहमानपर दबाव बढ़ने लगा तो शहर पुलिसने एक दिन अलीरहमान को हवालात में बंद किया । वे रातभर पुलिस थाने में रहे । दूसरे दिन दयाल ने उन्हें जमानतपर छुड़ाया । अलीरहमान बहुत दुःखी हुये, उनकी आत्मामें एक तूफान आया । इसलिये इस्लामियत और मुस्लिमलीग को भूलकर वे रात के घने अंधेरेमें निकले और मंदिर गये । सभी सो रहे थे । कुएँमें झाँककर देखा और वे कुएँ में उतर गये । पाँच छः डुबकियाँ लगाईं और उस शंख को उन्होंने बाहर निकाला । बाहर पुलिस पहरा दे रही थी । वे मंदिर चले गये और सुबह की नमाज पढ़नेके बाद उन्होंने जोरसे शंख फूंका । पुलिसने झटसे उन्हें गोलीसे उड़ा दिया । दूसरे दिन अखबारोंमें यह खबर छपी कि कोई अलीरहमान मंदिरकी मूर्ति तोड़ते हुये पाया गया और पुलिस की गोलीका शिकार हुआ । दीनदयाल को इसपर विश्वास नहीं हुआ । यह बात केवल शहनाज़ही जानती थी कि वह शंख अपने आप ऊपर नहीं आया। उसे उसके दादा अलीरहमान ने ऊपर निकाला था और उसे उन्होंनेही फूंका था ।

कर्फ्यू उठने के बाद शंख दर्शन के लिए लोगोंकी भीड़ लग गई । वहाँ एक मंदिर भी बनवाने का फैसला किया गया । शहनाजने कुदरत अन्सारी से मिलकर कोर्ट में मुकदमा दाखिल करना चाहा । वे एक माने हुये वकील थे । शहनाजसे उन्हें दिल ही दिल में प्यार भी था, लेकिन परिस्थितिका अन्दाजा लगाकर वे इतने डर गये कि उन्होंने शहनाज का केस अपने हाथों में नहीं लिया । उन्होंने कोई हिन्दू वकील देनेकी सलाह दी । शहनाजने इस सलाह के लिए कुदरत को दस

रुपये फीस भी दी। [1]

ठाकुर शिवनारायण सिंह ने शहला की ओर से मुकदमा कोर्ट में दाखिल किया। इधर शहला ने दीनदयाल से भी यह कहा कि वह अपने दादा का मज़ार बनवाना चाहती है। उसने यह भी कहा कि यदि वह अपने घर में अपने दादा का मज़ार नहीं बना सकती तो सरकार उसे इजाज़त दे कि उसकी लाश पाकिस्तान ले जाकर उनके बेटे के हवाले कर आये। दीनदयाल हक्का बक्का रह गये। वे कहने लगे " इसन मकाइयो कि साली वहीदुल हसन मर गये हैं, हम इ मर गये हैं आधे। बल्की घरवे वहीद हसन और दीनदयाल और तोहरे वकील ठाकुर शिवनारायण सिंह से बड़ा है।" आखिर दीनदयाल को यह कहना पड़ा कि तू जो कहती है वह भी सही है और वे जो कहते हैं वह भी सही है। शहला ने गाँव और दादा के मुकद्दमे का सभी हाल फिर से सुनाया। दीनदयाल तो केवल मुँह ताकते रहे। उनका मन पुरानी यादों में गुम हो गया था, जब पाकिस्तान नहीं बना था और वहीदुल हसन के साथ वे खेलते और एकही मौलवी से पढ़ते थे।

केस चलता रहा। शहर में वातावरण तंग था। लोग अपने घरों को छोड़कर जा रहे थे। स्कूल बन्द थे। बाजार खाली थे। हिन्दू - मुसलमान अपनी अपनी छुरियाँ तेज कर रहे थे। एक दिन एक कुएँ में किसीने गाय काटकर डाल दी। बाबू बांके बिहारीलाल उस रास्ते से रोज गंगा स्नान के लिए जाते थे। लोगोंका जमाव देखकर वे भी कुएँ पर चले गये। उन्होंने देखा कि भीड़ में जमा लोग मुसलमानों को गालियाँ दे रहे थे। उन्होंने गाय को ठीक तरह से देखा। उन्हें कुछ गड़बड़ी दिखाई दी। गाय गलत जगह से कटी हुई थी। तो उन्होंने कहा कि यह गाय मुसलमानोंने नहीं काटी है। तब लोग बाबू साहब पर ही बरस पड़े। गाँवमें बात फैली कि बाबू बाँके बिहारीलाल को उनके दरवाजे के कुएँ के पास मुसलमानोंने मार डाला। बेचारे गंगा नहाकर लौट रहे थे।

गाँवमें दंगा शुरू हुआ। शहला विशेष कर अपने घर पर रही थी।

---

१. ओस की बूंद - राही मासूम रज़ा - पृ.सं.८१।

बेहालशाहाने रिक्शा को रोका और शहला को जबरदस्ती घसीटकर घर ले गये। दरवाजा बन्द किया और शहला के कपड़े उतारकर बेहोश होने तक बलात्कार किया। बलवाईयोंने घरमें घुसकर देखा, शहला बेहोश पड़ी थी शाहसाहब तहमद खींच रहे थे। जब पुलिस आई तो वहाँ कोई नहीं था। केवल दो लाशे थी। शहला और शाह को बलवाईयोंने मार डाला था।

<u>पात्र और चरित्र चित्रण</u> --

"ओस की बूँद" उपन्यासमें वैसे पात्रोंकी भरमार है लेकिन निम्नलिखित पात्रों काही उपन्यास में विशेष महत्व है :-

१) वजीर हसन
२) दीनदयाल
३) शहला
४) वहशत अन्सारी

इन पात्रों के अतिरिक्त शहरनाज, दुल्हनबी, हाजरा, हरामत, ठाकूर, शिवनारायण सिंह, बाबू बांके बिहारीलाल और बेहालशाह ने भी उपन्यास की कथा की बुनावट में अपना हाथ बँटाया है।

१ : <u>वजीरहसन</u> :

वजीर हसन इस उपन्यास का केंद्रिय पात्र है। उपन्यास में उसकी उपस्थिति अंततक नहीं है, लेकिन उपन्यासकी कथा का मूल आधार वेही है।

वजीरहसन उपन्यासमें एक सच्चे हिन्दुस्तानी के रुपमें चित्रित किये गये हैं। वजीरहसन पाकिस्तान बनने के पहले मुस्लिम लीग का काम करते थे। उन्होंने और हयातुल्ला अन्सारी ने मिलकर पाकिस्तान के समर्थन में कई बार भाषण दिये थे। लेकिन जैसेही पाकिस्तान बन गया वे अपना घर, शहर, दोस्त और आत्मीयजनोंको छोड़कर पाकिस्तान नहीं जा सके। उन्हें पाकिस्तान के समर्थन में झाडेगये भाषणोंपर आज खेद है और वे स्वयं को अपराधी समझते हैं। पुत्र

अलिआकर ने पाकिस्तान न चलने का कारण उनसे पूछा तो उन्होंने कहा कि वे एक गुनहगार आदमी हैं और उसी सरजमीनपर मरना चाहते हैं जिसपर उन्होंने गुनाह किये हैं। वे अपने दोस्त दीनदयाल को छोड़कर एक पल भी नहीं रह सकते। दीनदयाल उनके लंगोटिया दोस्त थे। दोनों एक दूसरे के सिवाय अधूरापन अनुभव करते थे। वे अपने स्कूलपर मुश्फिक प्रेम करते थे। स्कूल के लिए उन्होंने अपने अलिआकर के लिए रखी हुई जमीन दी थी। यह सब उन्होंने पाकिस्तान बनने के पहले किया था। स्वतंत्रता मिलने के बाद बेटा अलीआकर पाकिस्तान चला गया। स्कूल का नाम बदल दिया गया। उनके दूसरे साथियोंने अपनी टोपी बदल दी और कांग्रेसी बन गये। कबीरहसन मर्माहत होकर आस्था के अंधेरे में कबके बंद हो गये थे। दीनदयाल और उनका मिलना आगे चलकर कम हुआ। नगरपालिकाके चुनाव में दीनदयाल जनसंघ की ओर से खड़े हुये। दीनदयाल और उनमें पाकिस्तान के निर्माण को लेकर बहसें होतीं। दीनदयाल को पाकिस्तानके निर्माण की आवश्यकता नहीं लगती और कबीर को मुसलमानोंका जीवन बदहाल लगता। मंदिर की घटना को लेकर कबीर हसनने जो आत्मसमर्पण किया वह उनके चरित्र का चरमोत्कर्ष है। परम्परागत शिव मंदिर की रक्षा के लिए उन्होंने अपनी आहुति दी। स्वयं कुएँ से शंख निकाला, मुहल्ले नमाज वहीं अदा की और उसके बाद स्वयंही शंख नाद किया।

कबीर हसनका चरित्र ऐसे व्यक्तिका चरित्र है जिसे अपना घर, शहर और देश से आत्मिक प्यार है। खानदानसे विरासतमें मिला हुआ शिव मंदिर उन्हें उतनाही प्यारा है जितना मस्जिद। उन्हें भलीभांति मालूम था कि वे भी एक जमाने में हिन्दू थे। इसलिए हिन्दू मुस्लिम और मंदिर मस्जिद में उन्हें कोई फर्क नहीं दिखाई देता। पाकिस्तान के निर्माण को लेकर जो पश्चाताप की भावना उनमें है वही सही देशभक्तिका सबूत है। दीनदयाल के सिवाय अपना जीवन अधूरा समझनेवाले कबीरहसन का व्यक्तित्व निश्चय उपन्यास का सर्वश्रेष्ठ व्यक्तित्व है।

१ : दीन दयाल :

दीनदयाल कबीरहसनके लंगोटिया दोस्त हैं । पाकिस्तान के निर्माण को लेकर उनके मनमें भी क्षोभ है, लेकिन सामान्य मुसलमानों के प्रति उनके मनमें नफ़रत की भावना नहीं है । दीनदयाल और कबीरहसन की दोस्ती देश और धर्म से भी ऊंची है । कबीरहसन को पुलिस द्वारा गिरफ्तार करने पर वे ही उसे जमानत पर छुड़ा लाते हैं । कबीर कीमृत्युपर अखबारों में यह खबर छपती है कि कोई कबीरहसन मंदिर में मूर्ति तोड़ते हुये पाया गया और पुलिसका शिकार हुआ । दीनदयाल को यह विश्वास है कि उसका दोस्त ऐसा घिनौना काम कभी नहीं कर सकता । शहला, कबीरसाहब की पोती अपने दादाका मज़ार बनाना चाहती है, लेकिन उस मंदिरपर अब हिन्दुओंने कब्जा कर रखा है । शहला के दो टूक प्रश्नोंका उत्तर दीनदयाल नहीं दे सकते । दीनदयाल को धर्मान्ध लोगोंके सामने झुकना पड़ता है । उन्हें अपनेदोस्त की दोस्ती को अलग रखकर यह कहना पड़ता है कि धर्म कबीरहसन और दीनदयालसे बड़ा है । लेखकने यहींपर दीनदयाल के व्यक्तित्वका संकोच किया है । धर्म के नामपर ही तो आजकल सबकुछ होता है।धर्म के नामपर चुनाव लड़े जाते हैं, धर्म के नामपर होतो झगड़े होते हैं । कबीर हसन के आगे दीनदयाल के व्यक्तित्व को छोटा बताया गया है । लेखकने दीनदयाल के चरित्र के द्वारा यह बताया है कि धर्मान्धता का आरोप केवल मुस्लिमोंपरही लगाना गलत है । हिन्दुओं में भी दीनदयाल जैसे हृदयसे प्रांजल लेकिन धर्ममार्तण्डोंके सामने नतमस्तक होनेवाले लोग हैं ।

१ : शहला :

इस उपन्यास का और एक महत्त्वपूर्ण पात्र शहला का है । शहला कबीरहसन की पोती है । रंगसे सावली,तेज और बुद्धिमान तथा यौवन के द्वार पर खड़ी हिम्मतवाली लड़की है । अपने दादा कबीर हसन की मौत के बाद मंदिर के अहाते में उनका मजार बनवाना चाहती है । इसके लिए उसे कोर्ट में जाना पड़ता है । शहला को विश्वास था कि उसका मुकदमा शहरका प्रसिद्ध वकील बहुशत अन्सारी चलाएगा । शहला और बहुशत आपस में एक दूसरे को चाहते थे ।शहला

वहशतपर मर मिटती थी लेकिन हिन्दुओंके डर से वहशत शहला का केस लेनेसे इन्कार कर देता है । वह उसे कोई हिन्दू वकील देनेकी सलाह देता है । मुकदमे भी धर्म के आधारपर बताये जाते हैं यह देखकर शहला को बड़ा दुःख हुआ । उसने ठाकुर शिवनारायणसिंह को अपना वकील नियुक्त किया । उसे अपने दादा और दीनदयाल की दोस्ती मालूम थी इसलिए दीनदयाल को उसने करीसोटी सुनाई । वह इतनी जिद्दी थी कि हिन्दू - सांप्रदायिकता के आगे वह बिलकुल नहीं डरी । उसने अदालतमें भी अपनी बुलंद आवाज में यह बताया कि हिन्दुओंका डर तो आज पैदा हुआ है । इस डर के पहले से यह मंदिर उनका रहा है । यह डर अब रहनेवाला है लेकिन साथही यह मंदिर भी उनकाही रहनेवाला है, क्योंकि इस मंदिरका नाता उसके खानदान के नाते से जुड़ा हुआ है । लेखकने शहला के व्यक्तित्व को एक आजाद ख्यालबुद्धिकी तथा अपनी खानदानी परम्परा के संरक्षण के लिए झगड़नेवाली युवती के रूप में चित्रित किया है । शहला का अंत दुखद बताया है । दादाका मजार बनाने की बात बैहालशाहने उसके दिमाग में बिठाई थी और शहलापर उसकी बुरी नजर थी । एक दिन उसकी बुरी नजर का उसे शिकार होना पड़ा और उसी समय बलवाईयोंने दोनों को मार डाला ।

वहशत अन्सारी --

उपन्यास का आधार वहशत अन्सारी की डायरी है । वही उपन्यास का सूत्रसंचालन करता है । उपन्यास में चित्रित घटनाओंका वह मध्यस्थ दर्शक है । अलीगढ़ की अपनी पढ़ाई पूरी कर वह शहरमें वकालत करते रहता है । वह शहलाका प्रेमी है । शहला के मुकदमेका केस वह हिन्दुओंके डर से नहीं लेता । शहला का केस न लेकर वह लोगोंको यह बताना चाहता है कि वह लोकल लीडरोंमें सबसे सेक्युलर है । मुसलमान उसे आस्तीनका साँप समझने लगते हैं । शहला का केस न लेने से उसे जुदाई की तनहाई में तड़पना पड़ा । वहशत वैसे कवि है । वह समझाता है कि मुकदमे भी यदि हिन्दू मुसलमान बनने लगे तो वकालत करने का कोई फायदा नहीं है । परिणामतः वह वकालत और गाजीपुर दोनों छोड़नेका फैसला करता है, और कोई नौकरी तलाश करने लगते हैं । शहला से प्यार होते हुये भी वह उसको

मदद नहीं कर सका इसका उसे दुःख है। उसके प्रेमी और कविहृदय को केवल कबोर ही सहनी पड़ती है। उपन्यास में उसका अस्तित्व विशेषमहत्व पूर्ण नहीं है।

इन पात्रों के अतिरिक्त उपन्यासमें और भी बहुत सारे पात्र हैं। इन पात्रों में हाजरा का एक पात्र भी अपनी विशेषता लिए हुये है। वह पाकिस्तान गये हुये अपने पुत्र अलीबाकर के लिए तड़पती रहती है। पाकिस्तान के निर्माताओं और अपने पती वजीरहसन को भी वह खरीखोटी सुनाती रहती है। उसके लिए पाकिस्तान शब्द का अर्थ केवल " जुदाई " है। वह अपने बेटे के लिए पागल हो गई है। उसे हिन्दू-मुसलमान और उसकी राजनीतिसे कोई मतलब नहीं है। वह तो कभी ओढ़ तक देने नहीं जाती। उपन्यास में उसका भलेही विशेष महत्व नहीं रखता लेकिन पाठक की सहानुभूति उसे मिलती है।

कथोपकथन --

इस उपन्यास में कथोपकथन का बड़ा महत्व है। लेखकने वहशत अन्सारी के डायरी के आधारपर उपन्यास लिखा है और अपने संवाद लेखन की कला से उसमें जान भर दी है। आरंभसे अंततक उपन्यास संवादोंके आधारपरही आगे बढ़ता है। संवाद पात्रों के चरित्रोंपर प्रकाश डालते हुये उनके व्यक्तित्व को साकार करते हुये आगे बढ़ते हैं। इन संवादोंमें भावुकता है, हृदयको तड़पन है, मानवीयता का स्वच्छ निर्झर है और कुछ पात्रोंकी असलियत बतानेवाली ताकत भी इसके अतिरिक्त संवाद स्वाभाविक,प्रवाहमयी और रोचक बन पड़े हैं। एक उदाहरण देखिए —

"हम आपको हिन्दी पढ़ा देंगे।" शहलाने कहा "

"पढ़े में त कउनो हरज ना है। बाकी हम ई सोच रहे कि हम अपनी जबानपढ़के काहे न जी सकते अपने मुलुक में ? हम का दीनदयालसे कम हिन्दुस्तानी हैं ? दसवीं सदी में हम हूँ हिन्दू रहे।"[1]

---

१. ओसकी बूँद - राही मासूम रजा - पृ.सं.२१।

अपने बेटे के लिए तड़पती हुई हाजरा को देखिए --

" नहीं आपको ई बताए की पड़ि है कि आप बड़े हैं
कि वहीर हसन ? का हम जिन्दगीभर यहीं मारे नमाज रोजा
किया रहा कि तू हमरे अल्लन को झट पाकिस्तान भेज दियो ।
बाहर जाय ऊ पाकिस्तान . . . हाजरा रोने लगी ।
हम पाकिस्तान बनावैया वहीरहसन को माफ करे वाले ना हैं ।"[1]

इसके अतिरिक्त वहीरहसन और दीनदयाल की झल्लाहट में निकले गालियाँ मिश्रित संवादभी अपना अलग स्थान रखते हैं ।

राहीके संवादों में रोचकता है, प्रवाह है, भावों को व्यक्त करने की क्षमता और पाठकों को जकड़कर रखने की ताकद भी है ।

भाषा और शैली --

"आधा गाँव " की गालियों को लेकर लेखक की बड़ी आलोचना हुई थी । जिसके कारण " टोपी शुक्ला" में गालियाँ नहीं के बराबर है, लेकिन " ओस की बूँद " में फिर गालियोंका उदय हुआ है । लेखकने अपनी इस प्रवृत्तिका समर्थनभी भूमिका में किया है । उनकेही शब्दोंमें -- " मैं साहित्यकार हूँ । मेरे पात्र यदि गीता बोलेंगे तो मैं गीता के श्लोक लिखूँगा और वह गालियाँ बकेंगे तो मैं आवश्य उनकी गालियाँ भी लिखूँगा ।"[2] लेखक पात्रोंपर और जबरदस्ती भाषा लादना नहीं चाहता । लेखक यथार्थ के धरातलपर उतरकर पात्रों को बोलनेकी आजादी देता है, जिसके कारण गालियाँ अस्वाभाविक नहीं लगती । भाषा में इस प्रवृत्तिके कारण स्वाभाविकता जरूर आई है । लेखक अपनी भाषा पात्रों पर नहीं थोपता । पात्रानुकूल भाषा का उपयोग हुआ है । घरकी स्त्रीयाँ और

---

१. ओसकी बूँद - राही मासूम रजा - पृ.सं.४६ ।
२. ओसकी बूँद - राही मासूम रजा - पृ.सं.७ - भूमिका - ।

कम पढ़े-लिखे लोग भोजपुरी उर्दू का प्रयोग करते हैं। शिक्षित मुसलमान हिन्दी का प्रयोग करते हैं, जिसमें - उर्दू का प्रभाव स्पष्ट देखने को मिलता है।

भाषा में कसाव और प्रवाह है। लेखक ने सही भाषा में पात्रों की मनस्थिति का चित्रण किया है। उर्दू बहुलता लेखक की एक विशेषता ही बन गई है। उपन्यास के अधिकांश पात्र ही मुस्लिम होने कारण उर्दू की यह बहुलता अखरती नहीं है। संस्कृत निष्ठ हिन्दी का प्रयोग होता तो उसमें अस्वाभाविकता ही आती।

शैली की दृष्टि से देखा जाए तो यह उपन्यास वहशत अन्सारी की डायरी के आधार पर लिखा हुआ होते हुये भी डायरी शैली को नहीं अपनाया गया है। वहशत स्वयं उपन्यास का एक पात्र बनकर वर्णनात्मक शैली में उपन्यास आगे बढ़ता है। किस्सा कहने की उर्दू शैली को यहाँ पर भी अपनाया गया है। जिसके कारण रोचकता बढ़ गई है। घटनाओं के आधार पर सामाजिक समस्या पर अपने विचार व्यक्त करने की लेखक की आदत इस उपन्यास में बार बार देखने को मिलती है। ऐसा लगता है जैसे लेखक के आंतरिक विचारों को व्यक्त करने में पात्र असमर्थ लग रहे हों।

शिल्प --

उपन्यास सात अध्यायों में और १२७ पृष्ठों में पूर्ण किया गया है। सात में से पहला और अंतीम केवल एक एक पृष्ठ का है। इस दृष्टि से उपन्यास पाँच ही अध्यायों में समाप्त होता है। इसे हम लघु उपन्यास भी कह सकते हैं। वहशत अन्सारी के डायरी के पन्नों के आधार पर उपन्यास को खड़ा करना लेखक के रचना ~~लेखक की रचना~~ कौशल का परिचायक है। लेखक का कवि मन भी उपन्यास में कहीं कहीं पर उमड़ पड़ा है। राही अनुभूति और भावपक्ष के साथ साथ वस्तुतत्व तथा चरित्रचित्रण के उपासक है, शिल्प कौशल आपके लिए गौण बन जाता है। इस उपन्यास में भी हिन्दू - मुस्लिम भावभूमि का चित्रण करना उनका उद्देश्य रहा है। अपने उद्देश्य की सफलता के लिए लेखक ने उर्दू की किस्सागोई शैली को ही अपनाया है। उर्दू की रीति यथार्थवादी शैली और लेखक की यौन सम्बन्धों को

चित्रित करने की प्रवृत्ति इस उपन्यास में भी है । उपन्यास का अन्त परिणाम कारक है ।

उ द्दे श्य --

हिन्दु-मुसलमानों के आपसी मानवीय सम्बन्धोंको चित्रित करना लेखक का प्रमुख उद्देश रहा है । करीमहसन और दीनदयाल के सम्बन्धोंको, उनके प्रेम और दोस्ती को चित्रित कर लेखक अपने इस उद्देश में सफल रहा है । साथ ही हिन्दु-मुस्लिमोंमे प्राय: होनेवाले झगड़ोंके कारणोंका राहीने उपन्यास की कथा के माध्यम से प्रयास किया है । लेखक का विचार है कि सामान्य हिंदु मुस्लिम जनता एक दूसरेका आदर करती है, उनमें प्रेम और स्नेह के सम्बन्ध है लेकिन कुछ कट्टर धर्मान्ध लोगोंके बहकावे में आकर वे नफ़रत शक और डर की आग में जलने लगते हैं । दीनदयाल अपने दोस्त की मजार केवल हिन्दु नेताओंके दबाव के कारण मंदिर के अहातेमें बनवाने नहीं देते । लेकिन यह पक्ष भी देखने लायक है कि वे अपने दोस्त की मजार अपने घर के आँगन में बनवाने के लिए तैयार होते हैं ।

नि ष्क र्ष --

भावन नहीं है

साम्प्रदायिक दंगों के बीच दिखाई देनेवाली मानवीयता कोई आगन्तुक हिन्दुस्तान के मुसलमानों को यह भलीभांति मालूम है कि वे कहीं अरबस्तान - ईरान से आये हुये नहीं हैं बल्कि वे हिन्दुस्तानी भूमि की ही उपज हैं । यहाँ की भूमी उन्हें उतनीही प्रिय है जितनी हिन्दुओंको । उससे उनका अटूट नाता है । हजारों सालोंसे हिन्दुओंके साथ रहते हुये हिन्दुओंसे उनके सम्बन्ध धर्म और राजनीतिसे भी ऊंचे दर्जे के बने हुये है । करीम हसन और दीनदयाल जैसे लोग पूरे देश में देखने को मिल सकते हैं । उपन्यासकारने देशके बहुत ही महत्वपूर्ण प्रश्न को लेकर अत्यंत प्रभावकारी ढंगसे एक और हिन्दु-मुस्लिमोंके बीच के मानवीय सम्बन्धोंको उजागर किया है तो दूसरी और धर्मान्ध और राजनीतिक उद्देश्य की सफलताके लिए सामान्य जनताको भावनाओंसे खेलनेवाले स्वार्थी तत्वों की असलियत को भी स्पष्ट किया है । उपन्यासकार अपने उद्देश्य में सफल हुआ है ।

(ङ) दिल एक सादा कागज़ --

राही मासूम रज़ा का " दिल एक सादा कागज़ " उपन्यास सन १९७१ में प्रकाशित हुआ । उनके साहित्यिक व्यक्तित्व को समझने के लिए यह उपन्यास सहायक है । राहीने अपने जीवन की कडुवाहट को जिस बेदर्दीसे पिया है उस कडुवाहटके कुछ घूँट उन्होंने प्रामाणिकतासे इस उपन्यास में प्रस्तुत किये हैं । राहीजी को अपनी मातृभूमि से हृदयसे प्यार है । भारतीयता उनमें कूटकूटकर भरी हुई है । राहीजी को अपने देश से भी ज्यादा प्यार अपनी जन्मभूमि गाजीपुर से है । वहाँ की प्रत्येक वस्तुसे तो उनका नाता है ही, लेकिन विशेष रूपसे " मैदोविला" उनका अपना घर, उनके हृदयका एक टुकड़ा है, जिसमें उनका बचपन बीता ।

"दिल एक सादा कागज़ " हृदय के इस जुदा हुये टुकड़े को फिरसे प्राप्त करनेकी कहानी है । अपने इस हृदय के टुकड़े को प्राप्त करने के लिए लेखक को स्वयंको बेचना पड़ा है । " मैंने यह घर खरीदनेके लिए तो अपने आपको बेचा है । क्योंकि मैं इसी घरका एक रूप हूँ ।"[१] इतना होते हुये भी लेखक की यह जीवनी नहीं है । शीलाजी के पत्र के उत्तर में उन्होंने अपनी इस बातको इन शब्दोंमें जाहिर किया है -- " दिल एक सादा कागज़ " मेरी जीवनी हो सकता था । पर यह मेरी जीवनी नहीं है । उसके पन्नों में जो उदास सी चीज है,उसे स्वीकार कीजिए ।"[२] यही कारण है कि उपन्यासकार उपन्यासमें स्वयं उपस्थित होने के बजाय सैयद अली रफ़फ़त उर्फ़ बागी आज़मी उर्फ़ रफ़्फ़न के नामसे उपस्थित हुआ है ।

क था न क --

उपन्यास कुल बारह छोटे मोटे अध्यायोंमें विभाजित है और प्रत्येक अध्याय रफ़्फ़नकी जीवन की कुछ विशिष्ट घटनाओंसे जुड़ाहुआ है । प्रारंभिक

---

१. दिलएक सादा कागज़ - ले.राही मासूम रज़ा - पृ.सं.११८ ।

२. - वही - - वही - - शीलाजीका पत्र - पृ.सं.७ ।

दो अध्याय रफ्फन के बाल्यकालसे संबंधित हैं । ये दो अध्याय अनेक संस्मरणीय घटनाओंसे भरे हुये हैं । इन्हीं अध्यायोंमें रफ्फन के पिता अली हैदर जैदी, दादा कर्नल जैदी, भाई जानू, जन्नत बाजी और परिवार के अन्य सदस्य पहली और अंतिम बार उपस्थित हुये हैं । यहाँ रफ्फन का चित्रण एक अबोध बालक के रूपमें हुआ है । यही वह रफ्फन है जो जन्नत बाजीसे हृदयसे प्रेम करता है, उसे अनेक संगत - असंगत प्रश्न पूछकर तंग करता है । घरमें जन्नत बाजी ही एक ऐसी व्यक्ति है जो रफ्फन के हर कसूर को माफ करता है और हर बार उसके पक्षमें खड़ा रहता है । जीवन का पहला दर्द तो रफ्फन को तब झेलना पड़ता है, जब उसकी प्यारी जन्नत का विवाह भाई जानू से होता है । उसकी अपनी जन्नत भाई जानूसे विवाह बद्ध होकर जन्नत बाजी बनगई ।

धीरे धीरे बचपन बीत गया । रफ्फन के जीवनमें बचपन का बड़ा महत्व है । बचपन की अनेक घटनाओंमें जन्नत का उससे बिछुड़जाना विशेष महत्व रखता है । जन्नत और जैदी विला दो ऐसी " चीजें हैं, जिसे वह जीवनभर एक पल के लिए भी भूल नहीं सका । जिंदगीमें अनेक ठोकरें खाईं लेकिन इन दो चीजोंको वह अपनेसे अलग नहीं कर सका ।

देश विभाजन के समय भाई जानू, जन्नतबाजी और पिताजी पाकिस्तान चले गये । जैदी विला को कस्टोडियन ने नीलाम कर दिया और आज वहाँपर गुरुचरण साह रहने लग गये हैं । रफ्फन अपने ही गाजीपुरमें बेघर हो गया । कुछ दिनोंतक अलीगढ़ में इतिहास पढ़ानेका काम किया और यहींपर एक मुशायरेमें अलीगढ़ की जन्नत उसपर आशिक हो गई । इस मध्यम वर्गीय लड़कीने कवि रफ्फनसे एक दिन विवाह किया । कुछही दिनोंमें शादीका नशा उतरने लगा । महंगाई के साथ जीवनकी मिठास कम होने लगी । जीवनमें पहलीबार उसे मालूम हुआ कि " प्यार का शासन जिंदगी की दूसरी चीजोंके कीमतों के शासनसे जुदा होता है । प्यार एक साफ सुथरा घर नहीं बन सकता । वह केवल यह कर सकता है कि ख्वाहिशों के घावों में उंगली चुभाकर याद दिलाता रहे कि आदमी घायल है । . . . . प्यार एक बेदर्द चीज है । दुश्मन । हराम जादा ।"..[1]

१. दिल एक सादा कागज - ले.राही मासूम रजा - पृ.सं.१०१ ।

उसने फैसला किया कि वह जन्नत को लेकर कहीं और चला जायेगा । उसे नारायणगंज के हाजी मस्तान डिगरी कॉलेजमें इतिहास पढ़ानेकी जगह मिल गई ।

नारायण गंजमें भी रमफन को बहुत कुछ झेलना पड़ा । वहाँपर आते ही उसे मालूम हुआ कि उसकी नियुक्ति उसके सहपाठी दोस्त राम अवतार की जगह हुई है । उसे यह भी मालूम हुआ कि ठाकुर साहब रामअवतारसे खुश नहीं हैं, और उसे यहाँपर बड़ी सावधानी से रहना पड़ेगा ।

नारायण गंजमें वह थोडेही दिनोंमें चर्चाका विषय बन गया । उसकी उठ बैठ बडे लोगोंमें होने लगी । रमफन उर्फ शायर बागी आजमी के साथ चाय पीने और उसके शेर सुननेमें बडे बडे ऑफिसरोंकी औरते धन्यता मानने लगी । लेकिन यह चक्करभी अधिक दिनोंतक नहीं चल सका । ठाकुरसाहब और चेअरमैन हाजी साहब की आँखोंकी वह ^किरकिरी^ बन गया। शारदा के बलात्कार केस में उसने गवाही दी और यही केस रमफन परही उलटाया गया । उसे बदनाम कर नौकरीसे निकाल दिया गया ।

ऐसेमें बम्बई के एक कवि सम्मेलनमें वह अपनी कविताएँ पढ़ने जाता है, और यहाँपर एक फिल्म निर्माता रमफन उर्फ बागी आजमीको लपक लेता है । रमफन बम्बई चला जाता है और यही उसके जीवनमें एक नया मोड़ आता है ।

बम्बई के फिल्म जगतमें उसे अनेक कड़वे घूँट पीनेपडे । यह दुनियाही कुछ अजीब थी । रमफनको पहले तो बुरी तरह निराश होना पडा । बागी आजमी को कवि के रूपमें कोई नहीं पूछ रहा था । घर चलाना मुश्किल हो गया था । जिन्दगी के इस मोडपर उसके दोस्तोंने उसे राय दी कि वह शायर तो बहुत अच्छा है पर फिल्मी गीत कुछ और चीज हैं । गानेमें प्रतियोगिता भी बहुत है । अच्छा हो अगर वह कहानियाँ बेचना शुरू करे । रमफन को मालूम था कि वह कहानियाँ या उपन्यास नहीं लिख सकता और दूसरे लेखकोंकी तरह अंग्रेजी लेखकों की कहानियाँ भी चुरा नहीं सकता । लेकिन घरतो चलाना था । जन्नत ने नोटिस दिया था कि अब घर चल नहीं सकता तो उसे मजबूरन उपन्यासकार

बननाही पड़ा । यह नया अनुभव था । यह काम करते समय उसकी रंग रग में कड़ुवाहट दौड़ने लगती । पैसोंके लिए उसे अपनेको बेचना पड़ रहा था । रफ़न के मनकी कड़ुवाहट इन शब्दोंमें --

" रोशनाई के लिए अपने को बेचा किये हम
ताकि सिर्फ इसलिए कुछ लिखनेसे बाकी न रहे
कि कलम सूखक थे और लिखनेसे मजबूर थे हम -- "[1]

रफ़नको घर चलाने के लिए खुद को बेचना पड रहा था, शराब जीना पड रहा था। घरका किराया देना, बिजलीका बिल भरना एक अच्छी नज्म और कहानी लिखनेसे ज्यादा जरूरी हो गया था । बागी आजमी की सूरत यहाँ बदल गई है । वह अपनीही नजरोंसे गिर रहा था । रफ़न को यह भूलनेमें समय लगा कि वह एक अच्छा साहित्यकार है । उसने अपने साहित्यकारसे समझौता कर लिया । उसनेभी अन्य लेखकोंकी तरह स्वयंको बेचना शुरु किया । उसने बहुतसारे अंग्रेजी उपन्यास खरीद लिये और बागी आजमी का नाम फिर चारों ओर फैल गया । देखते देखते उसे करीब पन्द्रह फिल्मे मिल गई । अच्छासा फ्लैट मिल गया । अच्छे अच्छे निर्माता और निर्देशक उसके पीछे पड़ने लगे । वह दिनभर तो हँसते रहता लेकिन जैसेही घर आता, अपने अंदर की उदासी जन्नतसे छिपाता, उन किताबों की तरफ देखनेसे शरमाता जिन्हें उसने बुरे दिनों में भी खरीदा था और बड़े प्यारसे पढा था । धन दौलत और खासी प्रसिध्दि मिलने के बावजूद भी उसकी अंतरात्मा दुःखी थी ।" क्यों कि वह जानताथा कि उसने अपनी हकीकत गुम कर दी है । कि वह एक अर्थहीन परछाई है, जिसे लोग न जाने क्यों बागी आजमी पुकारे जाते हैं ।"[2]

रफ़नने " जैदी विलाका भूत " नामसे एक फिल्म निकाली लेकिन वह चल न सकी । उसने एक दिन गाजीपुर जाकर अपने " जैदी विला" को खरीद

---

१. दिल एक सादा कागज - ले.राही मासूम रजा - पृ.सं.८० ।
२. - वही- -वही- पृ.सं.१२५ ।

लिया और उसका एक स्वप्न पूरा हुआ ।

"दिल एक सादा कागज " की कहानी गाजीपुर बम्बई और ढाके के बीच घटित घटनाओंका एक सिल-सिला है । पहले तो भाई बानू रफ्फनको ढाका आनेके लिए बार बार कहते, हिन्दुस्तान को गालियाँ देते । " जो मुल्क तुम जैसे शायर को दो सौ महीनेसे ज्यादा नहीं दे सकता वह मुल्क इस काबिल नहीं कि उससे प्यार किया जाये । गोली मारो उस मुल्कको । मैंने ढाका युनिवर्सिटीमें बात बनाई है ।"[1] लेकिन रफ्फन सोचता, जहाँ मेरा तीन चौथाई दिल जैदी विला की यादोंसे भरा है वहाँ भाई को ढाका आनेके लिए कहते हुये शर्म आनी चाहिए । कुछ सालों के बाद उसे यह मालूम हुआ कि जन्नत बाजी ब्रिगेडियर रहमान नियाजी के साथ रहने लगी है । जो लोग हिन्दुस्तानमें अपनी इज्जत आबरू असुरक्षित पाकर पाकिस्तान चले गये थे उनकी ही इज्जत आबरू आज ढाके में दुआ माँग रही थी । ऐसे में ही सन ७१ में पाकिस्तान के साथ भारत का युद्ध शुरू हुआ और भाई बानू शरणार्थी बनकर भारत आये । साथमें उनकी जवान लड़की शहरबानो भी थी । जनरल नियाजी की इस्लामी फौज के सिपाहियोंने उसके साथ कई रातें गुजारी थीं और वह माँ बननेवाली थी । मेरठके शरणार्थी कैम्पमें शहरबानो रफ्फन से लिपटकर रो रही थी और भाई बानू इकबालके इस्लामी तराने को भूलनेकी कोशिश कर रहे थे । यहींपर कथा समाप्त होती है ।

कथा का अंत नाटकीय ढंगसे हुआ है । राहीने रफ्फन के जीवन चरित्र को चित्रित करतेसमय प्रारंभसेही इस शैलीका प्रयोग किया है । बचपन के बाद बम्बई का जीवन शुरु हो जाता है और बीचमें फिर नारायण गंज और अलीगढ का वर्णन आता है ।

कथा के आरंभिक प्रकरणोंमें बालमनोविज्ञानका सहारा लेकर रफ्फन के बालपन का सुन्दर चित्रण किया है। लेकिन छ: सालके बच्चेमें जो यौन जिज्ञासा

---

१. दिल एक सादा कागज - ले.राही मासूम रजा - पृ.सं.१४२ ।

बनाई है, वह खटकनेवाली है । रामन का " बेदी विला" अपनेही घरमें मेहमान बनकर आनेका प्रसंग और वहाँ उसके द्वारा पढी हुई कविताएँ, सारा प्रसंग सुन्दर और कलात्मक बन पड़ा है ।

कथा में नारायण गंज का वर्णन अपना अलग स्थान रखता है । नारायण गंज उन शहरोंका प्रतीक है, जिसे न हम शहर कह सकते हैं , न देहात । ऐसे गांवोंमें हरदम चलनेवाली राजनीतिकी निकम्माजी, शैक्षणिक संस्थाओंकी भ्रष्ट मनोवृत्ति, आधुनिकता के पीछे पड़कर स्वयंको प्रोग्रेसिव कहने की ललक आदिका सुन्दर चित्रण हुआ है । स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद एक नया मध्यम वर्गीय नौकर पेशा वर्ग उभरकर आया है । छोटे छोटे गाँवोंमेंभी अब क्लब खुल गये हैं । महिला मंडलोंकी स्थापना तो गई है । माला और शारदा जैसी युवतियाँ और कालीचरण जैसे लीडर अब हर छोटे शहरमें देखनेको मिल रहे हैं । लेखक ने शारदा के बलात्कार का प्रसंग रखकर नारायण गंज जैसे गांवोंमें चलनेवाली ज्यादतियोंका अच्छा चित्र उपस्थित किया है ।

बम्बईके फिल्मी उद्योग का भी राहीने यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है । यहाँ साहित्यिक और नैतिक मूल्य कुछ महत्व नहीं रखते । यहाँ किसीको बदनाम करनेमें और किसीका सम्बन्ध किसीसे जोड़कर अफवाहें उड़ानेमें देर नहीं लगती । यहाँ छोटी-छोटी बातोंपर पैसा बहाया जाता है, लोग चमचमाहट के पीछे दौड़ते रहते हैं ।

कथा का तीसरा कोना भी लेखकने बड़ी कुशलतासे प्रस्तुत किया है । राही ने इस तीसरे कोनेपर खड़े होकर निर्मोहतासे पाकिस्तान गये हुये भाई जानू और जन्नत बाजीका हाल सुनाया है । उसने इनके रिश्तोंसे जुड़े इन लोगोंपर पाकिस्तान जानेपर क्या गुजरी इसका यथार्थ चित्र खड़ा किया है । भाई जानू, जन्नत बाजी और शहरबानों को जो व्यथा कही गई है, उससे अलग व्यथा अन्य पाकिस्तान जानेवालोंकी भी नहीं रही होगी ।

संक्षेपमें रामनको कथा को राही ने रोचक और प्रभावकारी ढंगसे प्रस्तुत किया है ।

पात्र और चरित्र चित्रण --

"दिल एक सादा कागज़ " एक चरित्र प्रधान उपन्यास होने के कारण रफ़्फ़न ही इस उपन्यास का प्रमुख और केन्द्रीय पात्र है । इसके बाद जन्नत का स्थान आता है । बाकी सभीपात्र रफ़्फ़न के चरित्र को बल प्रदान करने के लिए और प्रसंग के अनुसार आये हुये हैं । उपन्यासमें उनका महत्व केवल रफ़्फ़न के कारण है ।

सैयद अली रफ़्फ़ान उर्फ़ बागी आज़मी उर्फ़ रफ़्फ़न --

रफ़्फ़न उपन्यासका प्रमुख और केंद्रीय पात्र है । रफ़्फ़न बचपनसेही बुद्धिमान और जिज्ञासु है । रफ़्फ़न की बचपन की घटनाओं का रफ़्फ़न के व्यक्तित्व निर्माणमें बड़ा हाथ है । बचपनसेही उसे अपने गाज़ीपुर और घर " ज़ैदी विला " से हृदयसे प्यार था । बचपनमेंही उसे जन्नतसे प्यार हो गया था, जो आगे चलकर भाई जानसे ब्याही गई और जन्नतभाभी बन गई । उसने अपने मनमें निश्चय किया कि वह शादी करेगा तो जन्नत नामकी किसी लड़कीसेही करेगा । रफ़्फ़न को जीवनमें अनेक संकटोंका सामना करना पड़ा । परिवारके सभी लोग पाकिस्तान चले गये । ज़ैदी विला को कस्टोडियन ने नीलाम किया और रफ़्फ़न अपनेही गाज़ीपुरमें बेघर हो गया । रफ़्फ़न का दिल कविका दिल है । वह ज़ैदी विला को फिरसे प्राप्त करने के लिए स्वयं को बेच भी देता है । जीवन के रास्ते पर चलते समय उसे अनेक कटु अनुभवोंको झेलना पड़ा । नारायण फंडमें वह टिक नहीं सका । अपने स्वच्छन्द व्यक्तित्व के कारण वहाँ उसे बदनाम होना पड़ा और एक दिन नौकरीसे निकाल दिया गया ।

बम्बई के जीवनमें भी उसे बहुत कुछ सहना पड़ा लेकिन उसने अपने दिल में एक जिद्पाल रखी थी ज़ैदी विला को फिरसे प्राप्त करने की । इसके लिए उसने अपने साहित्यकार से समझौता किया और फ़िल्मों लेकर अधीरा मराल लिखकर अपने स्वप्नको पूरा किया । रफ़्फ़न को यह सब करते समय बहुत कचोट सहनी पड़ी । धन,दौलत,प्रसिद्धि प्राप्त करनेपरभी उसकी अंतरात्मा दुःखी थी । उसे

मालूम था कि उसने अपनी आत्मा के साथ गद्दारी की है ।

रफ़्फ़न को अपने देश, जन्मभूमि गाज़ीपुर और ज़ैदी विला से इतनी प्यार है । भाई जानू के बारबार ढाका बुलानेपर भी वह उसकी ओर ध्यान नहीं देता । रफ़्फ़न को एक देशभक्त भारतीय मुसलमान के रूपमें चित्रित किया गया है । गाज़ीपुरके एक मुशायरेमें रफ़्फ़न अपनी अंतिम इच्छा जाहिर करता है --

" मगर शायद वतन से दूर मौत आये
तो मेरी यह वसीयत है कि यह कागज़ मेरे घर के पतेपर भेज दो
और मुझको देखाकर
अगर उस शहरमें छोटीसीभी एक नद्दी बहती हो तो मुझको उसकी
गोदमें सुलादो और उस नद्दी से कह दो कि ये गंगा का बेटा आजसे
तेरे हवाले है --
तो नद्दी मेरी माँ
मेरी गंगा की तरह मेरे बदन का ज़हर पी लेगी ...."[1]

रफ़्फ़न को भाई जानू और जन्नत बाजीका ख़त सुनकर बड़ा दुःख होता है । पूरे उपन्यासमें उसके जीवनपर एक उदासी की कालिमा छाई हुई है ।

संक्षेपमें रफ़्फ़न का चरित्र एक सच्चे भारतीय साहित्यकार का चरित्र है । एक ओरतो उसमें भारतीयता कूट कूट कर भरी हुयी है तथा दूसरी ओर अपने अंदरके साहित्यिक के प्रति भी वह निष्ठावान है। केवल परिस्थिति की मारने उसे अपाहिज बना दिया है ।

जन्नत --

उपन्यास में जन्नत नायका दो बार उपयोग हुआ है । पहले दो प्रकरणों की जन्नत उसकी बचपन की प्रियतमा है जो उससे कई वर्ष बड़ी है । यह वह जन्नत

---

1. दिल एक सादा कागज़ - डॉ.राही मासूम रज़ा - पृ.सं.41 ।

है जो रमफन को बचपन में प्यार देती है। उसके सभी सही गलत प्रश्नोंका उत्तर देती है, और उसकी सभी गलतियोंको माफ कर देती है। यह जन्नत एक दिन भाईजान से फँस जाती है और घरवालों को मजबूरन उसका विवाह भाई जान से करना पड़ता है।

उपन्यास की दूसरी जन्नत रमफनकी पत्नी है। वह रमफन के साथ पूरे उपन्यासमें छाई हुई है। अलीगढ़के एक मुशायरेमें वह बाकी शायरीपर आशिक हो जाती है और उससे विवाह भी हो जाता है। लेकिन कुछ ही दिनोंमें उसे पता चलता है कि उसने प्यार किया है शायर बाकी आजमीसे और विवाह किया है एक स्कूल मास्टर रफअत जैदी उर्फ रमफन से। रमफन के बुरे दिनों में भी उसने उसे धीरज और साहस दिया। बम्बईमें उसको लेकर कई अफवाहें उठीं, लेकिन उसने अपने पतिके लिए सबकुछ छोड़िया। उपन्यासमें उसका चरित्र एक पतिव्रता नारी के रूपमें ही है।

उपन्यास के अन्यपात्र उतने महत्वपूर्ण नहीं हैं। वे केवल प्रसंगवश आये हुवे हैं और केवल रमफन की कहानी को आगे बढ़ाते हैं।

<u>कथोपकथन</u> --

"दिल एक सादा कागज" के संवाद अत्यंत सशक्त और प्रवाहमय बन पड़े हैं। उपन्यास के आरंभ के दो अध्यायों में घरके लोगोंको भोजपुरी भाषा का प्रयोग करते हुए बताया गया है। यह भोजपुरी का रूप उर्दू मिश्रित है। अन्य अध्यायों में सभी कथोपकथन खड़ी बोली में ही हैं।

कथोपकथन रमफन की कथा को आगे बढ़ानेमें सहायक हैं। कथोपकथनमें मुहावरों और कहावतों के साथ साथ व्यंग्यका भी सफलतासे उपयोग किया गया है। कथोपकथन का एक नमूना देखिए ---

जन्नतने पूछा "यह तुम इधर दस बारह दिनसे गायब कहाँ रहते हो ? मुलाकात ही नहीं होती।"

"हम कल्लनिया के पास रहित हैं। अल्लाकसम बाजी, उसकी भाईजान से भी ढेर नमकीन है।"

" फिर वही बेहूदा बात शुरु कर दी ।"

" आपसे तो कुछ कहनाही मुश्किल हो गया है । हम खुद चिढ़ता है आज कम्पनियाको ।"[१]

और एक उदाहरण देखिए ---

" क्या सोच रहे हो ? "

" कुछ नही "

रप्फन फिर सोच में पड़ गया ।

" कौन याद आ रहा है ? "

" कोई नहीं ।"

रप्फन फिर सोच में पड़ गया ।

" नफ़ीस,सईदा,सुरैया,बानो,या महजबीन ? "

" मै तो इन्हें याद करना कब का छोड़ चुका हूँ "

"कोई नाम रह गया क्या ? "

"हाँ " ।

" वह कौन है ? "

" जन्नत । " -- [२]

लेखक बीच बीचमें कथाएँ देता है और जहाँ जरुरत हो वहीं हाँ इस प्रकार के चुटीले संवाद रख देता है । कथा को आगे बढ़ाने का लेखक का यह नया तरीका है । कथोपकथन के वाक्य पात्रानुकूल हैं ।

वातावरण --

उपन्यास चरित्र प्रधान होने के कारण उपन्यासमें रप्फन के जीवन की प्रमुख घटनाओंके अनुकूल वातावरण रखा गया है । गाजीपुर ,नारायणगंज,अलीगढ़ और बम्बई के अनुभव चित्रित करते समय लेखक ने सूझ-बूझ से काम लिया है ।

---

१. दिल एक सादा कागज - राही मासूम रजा - पृ.सं.३१ ।

२. दिल एक सादा कागज - डे.राही मासूम रजा - पृ.सं.१०२ ।

बम्बई के फिल्म उद्योग का चित्रण करते समय वहाँ के जीवन का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है। लेखक पाठकोंको बम्बई के फिल्म उद्योग की सैर करा जाता है। नारायण गंज के चित्रणमें आजकल के छोटे शहरोंका चित्र प्रस्तुत किया है। नारायण गंज न तो शहर है और न देहात, इसको ध्यानमें रखकर वातावरण और घटनाओंका निर्माण किया है। विशेषत: केशव द्वारा पाखाना बनवाना और ठाकुर द्वारा उसका विरोध करना। छोटे गाँवमें चलनेवाली तिकड़मबाजी, स्कूल कॉलेजोंमें होनेवाले अनियमित व्यवहार ऐसे शहरोंमें रहनेवाले लोगों की स्वयं को आधुनिकसा बित करनेकी ललक आदिका सुन्दरचित्रण हुआ है।

भाषा और शैली --

उपन्यास की भाषा मंजी हुई है। "आधा गाँव" के बाद क्रमश: आनेवाले उपन्यासोंमें "दिल एक सादा कागज" लेखक की सृजनात्मक समझदारी और साहित्यिक ईमानदारी का प्रतीक है। भाषामें एक प्रवाह और रोचकता है। राही मूलत: कवि हैं। उनका कवि उनके लेखकपर हमेशा हावी रहता है। जहाँ जहाँ आत्मा की कचोट है, वहाँ वहाँ वह उभरकर उपन्यासके पन्नोंपर आ गया है। लेखक का यह शायराना अंदाज उपन्यासको और भी रोचक और प्रभावशाली बनाता है।

उपन्यास में उर्दू शब्दोंका बाहुल्य जरूर खटकता है, लेकिन राही सच्चे हिन्दुस्तानी हैं। वे जिस तरह हिन्दू और मुसलमानों में भेद मानने के लिए तैयार नहीं है, उसी तरह हिन्दी और उर्दू के भेद को मानने के लिए भी तैयार नहीं हैं। उन्हें तो केवल हिन्दुस्तानी शब्दसे प्यार है। उनके इस विचारसे असहमति नहीं होनी चाहिए और उर्दू शब्दों को लेकर बखेड़ा नहीं मचाना चाहिए। उर्दू और हिन्दीपर उन्होंने इतना जबरदस्त अधिकार पा लिया है कि सामान्य पाठक उनके उपन्यासों को पढ़ते समय हिन्दी - उर्दू के भेदको सहजतासे भूल जाता है। मुहावरे और कहावतों के साथ साथ व्यंग्यात्मकता का उपयोग भाषा को सौष्ठव

प्रदान करता है । यह व्यंग्यात्मकता और जबरदस्ती न होकर सादे जीवन से उभरकर आई है ।

लेखकने रफ्फन की कथा उसके जीवन के क्रमसे न कहकर एक विशिष्ट ढंग से कही है । बचपनकी समाप्ति के बाद उसे एकदम फिल्मी दुनियामें उतारा है, और बाद में फ्लैश बैक (पूर्व दीप्ति) शैलीका उपयोग करते हुये नारायणगंज और अलीगढ़ की घटनाओंका चित्रण किया है । विशेषतः बम्बई के फिल्म उद्योगसे उठकर एकदम अलीगढ़ का मुशायरा और जन्नत से विवाह का वर्णन थोड़ा अटपटा लगता है । लेकिन लेखका बयान करनेका ढंग ही ऐसा है कि वह पाठकोंको रेलगाड़ीसे उतारकर हवाई जहाज का चक्कर लगवाता है ।

उपन्यास में गालियोंका उपयोग कुछ जगहोंपर हुआ है लेकिन वे वाक्य अस्वाभाविक नहीं लगते । जिन लोगोंके मुँहसे वे निकली हैं उनकी जगह हम दूसरे शब्द भी नहीं रख सकते । उपन्यास में कुछ जगहोंपर यौन सम्बन्धोंका चित्रण हुआ है, उससे उपन्यासको कुछ लाभ बल नहीं मिला है । उल्टे सामान्य पाठकोंको आकर्षित करनेका यह एक भद्दा तरीकाही लगता है । लेकिन एक बात जरूर है कि ऐसे प्रसंग और दृश्य चित्रित करनेकी ललक लेखक के हर उपन्यासमें देखने को मिलती है ।

उद्देश्य --

" दिल एक सादा कागज " एक चरित्रात्मक उपन्यास है । रफ्फन के जीवनपर प्रकाश डालना और उसके देश और घर के प्रेम को दर्शाना लेखक का प्रमुख उद्देश्य रहा है । रफ्फन के चरित्र के साथ गाजीपुर अलीगढ़, नारायणगंज, बम्बई और ढाका ये शहर जुड़ेहुये हैं । जिसके कारण अलीगढ़ और नारायणगंज और बम्बई के फिल्म उद्योग का चित्र उभरकर आया है । ढाका गये हुये भाईजान और जन्नतआपा के हाल सुनाकर लेखकने पाकिस्तान गये हुये लोगों के टूटे हुये प्रम को अंकित किया है । इस तरह से उपन्यास की कहानी रफ्फन की होते हुये भी वह गाजीपुर, बम्बई और ढाका इस त्रिकोण की कहानी बन गई है । लेखक अपने इस सफरमें सफल रहा है ।

निष्कर्ष --

निष्कर्ष रूपमें कहा जा सकता है कि राहीजीका " दिल एक सादा कागज" उपन्यास चरित्रात्मक उपन्यासोंका सुन्दर नमूना है । लेखक ने अत्यंत सुन्दर और आत्मीय ढंग से अलग अलग कोनोंपर खड़े होकर रफ्फन के जीवनपर प्रकाश डाला है । रफ्फन के व्यक्तित्व को साकार करनेमें वह सफल रहा है । राही का यह उपन्यास उनकी लेखन कला की परिपक्वता का अच्छा उदाहरण है । कथा कहने की अपनी विशिष्ट पध्दति के कारण उपन्यास पठनीय बन गया है ।

(ज) सीन - ७५ -

राही मासूम रजा का " सीन-७५ " उपन्यास सन १९७७ में प्रकाशित हुआ । राही पिछले कुछ वर्षोंसे बम्बई के फिल्म उद्योग से जुड़े हुये हैं । वहाँ का जीवन और इस उद्योगसे जुड़े हुये लोगोंका सोचने समझने और आपसमें व्यवहार करनेका ढंग कुछ और ही है । व्यावसायिकता और स्वार्थान्धता तथा भौतिकवादी आधुनिक प्रवृत्ति इसके मूल में काम करती पाई जाती है । लेखक ने स्वयं इन सभी बातोंका प्रत्यक्ष अनुभव लिया है । उसने अपने अनुभव विश्व के कुछ चित्र इस उपन्यास में चित्रात्मक शैली में प्रस्तुत किये हैं ।

लेखक ने अली अमजद नामके एक कथा लेखक के माध्यमसे इन चित्रोंको प्रस्तुत किया है ।

कथानक --

अली अमजद अपने कमरेमें बैठकर अपनी फिल्म कथा का " सीन-७५ : दिन डाक बाना " लिख रहा है । यह लिखते हुये उसे बम्बई आनेसे लेकर आजतक की सभी सुखद एवं दुखद घटनाएँ याद आ रही हैं । उसके सामने एक कथाकाही निर्माण होता है, जिसमें वह स्वयं एक पात्र है ।

अली अमजद मध्यमवर्गीय घर का था और फिल्मी कथा लेखक बनने के लिए वह बम्बई आया हुआ है। उसके विचारसे उसके कहे जानेवाले फिल्मी लेखक बिक गये हैं। उन्होंने अपना आदर्श और व्यक्तित्व खो दिया है। वह अपनी आदर्श कहानियोंकी कल्पना लेकर बम्बई आता है। लेकिन यहाँ उसे पूछनेवाला कौन है। संयोगसे माई के अड्डेपर बी.डी.(बिरेन्द्रकुमार), हरीशराय और अलीमुल्लाह से उसकी भेंट हो जाती है। चारों मिलकर दिकुब गेस्ट हाऊस की एक कोठरीमें रहते हैं। अमजद फन्दा पटयालवी के लिए कहानियाँ लिखता था। बी.डी.पैदायशी बरोजगार था। उसने अबतक तीन छोटे मोटे रोल फिल्मों में किये थे। हरीश और उसकी बिलकुल नहीं पटती थी। ठीक कमानेवाला लेखक अलीमुल्लाह ही था। माई का अड्डा सभी फिल्मी कलाकारोंको और बम्बई के दादा लोगोंको मालूम था। सभी कड़की के दिनोंमें उधार शराब पीने के लिए वहाँ आते थे। एक दिन उस अड्डे को डिसूझाने खरीद लिया। लेकिन शौक माईसाही चलता रहा।

बी.डी.बैसे रसिक स्वभावका था। वह डिसूझा की लड़की रोझीसे प्रेम करता था और रोज उसे अपनी फिल्मी कहानियाँ सुनाया करता था। वह उसे एक हीरोइन बनानेका भी वादा कर चुका था।

फन्दाजीको वैसेही एक दिन एक मिडल पास रामनाथ नामका नौकर मिल गया, उन्होंने अली अमजद से कहानियाँ लेना बन्द कर दिया। यह रामनाथ कानपुरका था और राजेशखन्ना बनने और मुमताज से इश्क करने बम्बई आया था। खाली समय में वह बहुतही जबरदस्त फिल्मी कहानियाँ लिखता था। फन्दाजीने उसका अच्छा उपयोग कर लिया। उन्होंने उसकी तनखाह भी बढ़ा दी। फन्दाजी कुछही दिनोंमें हिन्दी फिल्म जगतमें एक प्रख्यात कथा लेखक बन गये। नाम और पैसाभी उन्होंने बहुत कमाया। दिनभर फन्दाजी अपने कारोबार में व्यस्त रहते और रात में देरसे घर लौटते। पत्नी राधिका भी अपनी सहेलियोंके साथ बाहर घूमती। घरमें बेटी पुष्पलता और रामनाथ अकेले रहते। वह पुष्पलताकी इच्छा पूरी करनेमें अपना समय लगाता। एक दिन शाम राधिका ने भी उसे लपक लिया। फिर तो वह माँ और बेटी दोनोंको भी

इच्छा पूरी करता रहा । यह बात पुष्पलता और राधिका दोनोंही जानती थी ऐसा नहीं बल्कि फन्दाजीको भी इस बातका पता लग गया था । लेकिन रामनाथ को छोड़नेका मतलब था फिल्मी दुनियासे उठ जाना । एक दिन रामनाथही इन बातोंसे ऊब जाता है और वह अपनी जगह गफ्फार खाँ उर्फ मुरारीलाल को काम देकर स्वयं मोढ़ासाहब की नौकरी करने लगता है । यहाँपर भी मोढ़ा साहब की नौकरानी छिबा हिडम्बा उसे लपक लेती है ।

फन्दाजी के घरके सामने फिल्म लेखक मदहोश साहब का घर था । मदहोश साहब कट्टर मुसलमान थे । घरमें अब्दुल नाम का नौकर था वह उनकी लडकी आलिया से प्रेम करता था । एक दिन बन्द कमरेमें आलिया को हिन्दू होने का पता लग जाता है । मदहोश साहब और आलिया बहुत दुःखी होते हैं । बात इतनेपर नहीं रुकी।अब्दुल उर्फ घनश्याम प्रसाद के माध्यमसे दूसरे नौकरभी आलिया का मजा चखते हैं। एक दिन मुरारीलाल भी आलिया को लपक लेता है लेकिन वह उसका गला घोंट देता है । गफ्फार उर्फ मुरारीलाल को यह बातही सहन नहीं लगती कि एक मुसलमान लड़की हिन्दुओंसे सम्बन्ध रखे।

इसी अमरुद के बाग में ही भोलानाथ चोपड़ा उर्फ लटक रहता था । भोलानाथ और उनकी पत्नी दोनों भी रंगीन थे । भोलानाथ पहले तो बिल-कलेक्टर थे । बादमें अपने स्वभावके बलपर सुपरवाइजार तक पहुँच गये । भोलानाथ और रमामें अक्सर झगड़े चलते रहते । इसके कारण सभी पडोसियोंने उसका नाम लटकनी रखा था । भोलानाथ को ऐसा लगता कि सभी मर्द रमा के चक्कर में हैं और रमा को लगता कि हर औरत भोलानाथ के चक्करमें है । एक दूसरे को शंकित नजरोंसे देखते रहते । रमा को सिनेमा देखनेका और ऊंची ऊंची साड़ियोंका शौक था । भोलानाथ उसका यह शौक पूरा नहीं कर सकते थे । रमाने अपना शौक पूरा करनेके लिए सरला मोढ़ा से दोस्ती की । सरला मोढ़ा को भी रमा जैसी सुन्दर औरत की जरूरत थी । उसे मर्दोंसे ज्यादा स्त्रियाँही अच्छी लगती थी।सरला से दोस्तीकर रमा का शौक पूरा होने लगा और सरला को भी उसका संगी मिल गया ।

अली अमजद इन तकलीफोंसे बहुत परेशान था और दूसरा घर देखना चाहता था । लेकिन बम्बईमें भगवान मिल सकता है लेकिन घर नहीं ।

एक दिन अलीमुल्लाह ने बी.डी.को रोज़ीका साथ छोड़नेकी सलाह दी लेकिन बी.डी.इस बात को हँसकर टाल गया । हरीश भी नजमा नामकी एक कॉलगर्ल से लगा हुआ था। एक दिन हरीश नजमा को लेकर डिब्बा आया । वहाँपर नजमा के सामने बी.डी.ने अलीमुल्लाह के मंगेतरका मज़ाक किया । अलीमुल्लाह रूठकर चला गया तो वापस नहीं आया । हरीश को भी कुछ फिल्मे लिखनेको मिल गई थी और वह भी कम कम आया करता था ।

बी.डी.ने अपनी बेरोजगारी दूर करने के लिए एक नयाही धंधा शुरू कर दिया । उसने भिखमंगोंके लिए " बेगर्स वर्कशॉप " खोल दिया । इसके लिए शहर के प्रसिद्ध फकीर हाजी फकीरा का साथ लिया । देखते देखते वह लखपति बन गया । बम्बईमें उसकी बस्ती हो गई । अलीअमजद को और हरीश को उसने भिखारियोंके संवाद लिखने के लिए दो हजार रुपये माहवार तय कर दिया । शाहजहाँपुरमें हिन्दू-मुस्लिमोंमें दंगा हुआ । बिहार पीड़ितोंका एक दल सहायता के के लिए बम्बई आया । वे सभी बी.डी.के ही आदमी थे और उनके संवाद अलीअमजद और हरीश ने लिखे थे । शहरमें इन पीड़ितोंकी दुःखभरी कहानी सुनकर वातावरण तंग हो गया और एक बलवेमें बी.डी.मारा गया ।

चार दरवेशोंमेंसे एक खत्म हुआ । अलीमुल्लाह पहलेही चला गया था । हरीश भी एक फिल्म निर्माता बन गया था । अलीअमजद केवल अकेला रह गया । उसके आदर्श कहाँ गायब हुये थे पता नहीं ।

एकदिन अली अमजद अपने कमरेमें मरा हुआ पाया गया । नौकर फर्नांडिसने हरीश को फोन किया, उस समय वह अपनी अगली फिल्म को हिरोईनके नंगे बदनसे खेल रहा था । उसने इन्स्पेक्टर जोष को सूचना दी । उसी दिन उसकी फिल्म का प्रीमियर था । प्रीमियर बोरिंग न हो इसलिए उसका शव पोस्टमार्टम के लिए भेज दिया गया । प्रीमियरमें लेखक अलीअमजदकी कुर्सी खाली थी । लोगोंने

पूछा तो हरीशने सरलतासे कह दिया " वह कल रात किसी कार्स मर गया ।" और हँसने लगा क्योंकि बाजूमें हेमामालिनी खड़ी थी और फोटो ग्राफर फोटो खींच रहा था ।

अलीअमजद की मृत्युपर कथा समाप्त होती है । लेखकने बड़ी खूबीसे बम्बईकी फिल्म उद्योगसे सम्बन्धित लोगोंका चित्रण किया है । इस उपन्यासके सभी पात्र गौण हैं । प्रमुख है वहाँ का वातावरण, वहाँ के सभी लोग । वहाँ का कोईभी व्यक्ति किसीके साथ ईमानदारी का व्यवहार नहीं करता । सभी के व्यवहार स्वार्थ और झूठी मान्यताओंपर आधारित हैं । यहाँ फिल्मी लेखक का साहित्यकार होना आवश्यक नहीं । रमानाथ जैसा मिडल्पास (पास अथवा फेल) व्यक्ति भी कहानियाँ लिखकर नाम कमा सकता है । यहाँपर स्त्री पुरुषों के आपसी सम्बन्ध अपनी अपनी आवश्यकता पर आधारित है । नैतिक मूल्योंका कोई महत्व नहीं । आदर्शवाद यहाँ चल नहीं सकता । शरीर बेचना यहाँ सामान्य बात है । यहाँ प्रेम जैसी कोई बात नहीं है । वह कभी भी हो सकता है और कभीभी टूट सकता है । यहाँ नजमा जैसी कॉलगर्ल भी है और सरला जैसी लेस्बियन सम्बन्ध रखनेवाली स्त्रियाँ भी हैं। रमा जैसी कामयाबीके पीछे दौड़नेवाली स्त्री भी है और पुष्पलता और राधिका जैसी एकही पुरुष से सम्बन्ध रखनेवाली माँ-बेटियाँ भी हैं । हरीश जैसे निर्माता लेखक हैं तथा वी.डी.जैसा मिखमंगोंका कर्दीय चलानेवाला भी ।

लेखकने उपन्यास की कथा को अत्यंत सुन्दर ढंग से मोड़ दिया है । अलीअमजद जो कि बम्बईकी दुनियामें अधूरा रहता है अपने आदर्शोंसे विमुख बनकर निराश बन जाता है और आत्महत्या कर लेता है । हरीश जैसे मित्रों को उसकी कोई परवाह नहीं । कथा का अंत प्रभावशाली है । बम्बई की व्यावसायिक फिल्मी दुनियाका चित्र खड़ा करनेमें लेखक सफल रहा है ।

<u>पात्र और चरित्र चित्रण</u> --

जैसा कि कहा जा चुका है, इस उपन्यासमें पात्रोंका महत्व नहीं है । लेखक का उद्देश्य बम्बई की फिल्मी दुनियाका साक्षात चित्र खड़ा करना है । फिर भी इस उपन्यासमें कुछ पात्र उभरकर आये हैं ।

१) अली अमजद
२) बी.डी.उर्फ वीरेन्द्रकुमार
३) हरीश

अली अमजद --

उपन्यासकारने अलीअमजद के माध्यम से पूरी कथा कही है । वही इस उपन्यासका संचालन करता है । अली अमजद एक मध्यमवर्गीय परिवारका व्यक्ति था । आदर्शवादी कहानियाँ लिखनेका उसे शौक था । फिल्मोंकी व्यावसायिकता देखकर तथा बड़े फिल्म लेखकोंकी पतनोन्मुख समाजका चित्रण करने वाली कथा को देखकर उसका यह विचार पक्का हो गया था कि फिल्मों के लेखक बिके गये हैं, उन्होंने अपना व्यक्तित्व खो दिया है। इस लिए वह अपने आदर्शोंको बेचने के लिए बम्बई आ जाता है । बम्बई आकर उसके सारे विचार वहीं के वहीं रह जाते हैं । उसे मालूम होता है कि यहाँ साहित्यिक कृतियोंका कोई मूल्य नहीं है । यहाँ तो एक साधारण व्यक्तिभी फिल्म की कथा लिखकर नाम कमा सकता है । यहाँ दोस्ती कोई मूल्य नहीं रखती । बी.डी.और हरीश साथ छोड देते हैं । यहाँ केवल पैसा काम करता है, आदर्श नहीं । बम्बईका पूरा वातावरण देखकर वह स्वयंकोही अपराधी समझने लगता है । जीवनमें उसका कोई काम पूरा नहीं हो सका । इश्क अधूरा रहा । आदर्शोंके सपने टूट गये । यहाँ सभीके चेहरे समान हैं । किसीको एक दूसरेसे अलग करके नहीं देखा जा सकता । बम्बई के वातावरणमें वह जीते हुये भी मर रहा था । उसे जीने और मरने में कोई फर्क ही नहीं लगता । वह निराश होकर आत्महत्या कर देता है ।

बी.डी.उर्फ वीरेन्द्रकुमार --

बी.डी.अलीअमजदका दोस्त था । बी.डी.ने ही उसे डिकूना गेस्ट हाउस में रहने के लिए बुलाया था । बी.डी.का चरित्र वैसे उपन्यासमें विशेष उभरकर नहीं आया । वह भी फिल्मी हीरो बनने आया था । एकदो फिल्मों में छोटासा रोलभी मिला था लेकिन जैसेही बम्बई की वास्तविकता को वह पहचानता है वह अपना लेबलभी बदल देता है । बेकार रहनेसे कुछ उल्टा काम करे यह समझकर

अपने दोस्तोंसे अलग होता है और भिखारियोंका एक वर्कशॉप खोल देता है। भिखारियोंकी अखिल भारतीय यूनियन भी वह स्थापित करता है और इस काम में हाजी फकीराकी मदद लेता है। इस वर्कशॉप के आधारपर वह बहुत पैसा भी कमाता है। हरीश और अलीअमजदको दो हजार महीना वेतनपर रखकर भिखारियों के लिए संवाद लिखवाता है। एक दिन वह कब्रे में मारा जाता है। उपन्यासमें उसका चरित्र कोई खास महत्व नहीं रखता। केवल बम्बई के जीवन का घिनौना पक्ष बताने के लिए उसका उपयोग किया गया है।

हरीश --

उपन्यास में हरीश भी एक कथा लेखक के रूपमें चित्रित किया गया है। उसके पास भी कोई आदर्श नहीं है। हरीश नजमा जैसी कॉल गर्ल के चुंगलमें फँसता है। नजमाकेही उसे रखा है। दोस्ती का कोई मूल्य उसके पास भी नहीं है। वह फिल्म निर्माता बननेपर अलीअमजद से पट कथा लिखवाता है। नैतिकतासे उसका कोई नाता नहीं है। अलीअमजदके मरनेपर उसे कोई दुःख नहीं है। उसके प्रीमियरके दिन ही उसकी मृत्यु हो जाने के कारण उसकी मृत्यु उसके लिए अडचन बन जाती है। इन्स्पेक्टर जोग के कहनेपर भी वह उसका पोस्टमार्टम करवाता है, ताकि उसके प्रीमियर शो में कोई बाधा न पड़े। साईड हीरोईनका नग्न अवस्थामें उसके बेडरूममें दिखाना उसके निर्माता ओंकी वृत्ति का प्रतीक है।

इसके अतिरिक्त भोलानाथ और उसकी पत्नी रमा, गोवालाल और उसकी पत्नी लाला, तथा फनदानी और उसकी पत्नी राधिका, छोटी पुष्पलता आदि पात्र फिल्मी दुनियाकी एक एक प्रवृत्ति के प्रतीक है।

कथोपकथन --

इस उपन्यासमें कथोपकथनका खास महत्व है। लेखकने पात्रोंके कथोपकथन द्वारा उनकी व्यक्तिगत प्रवृत्तियों को उजागर करनेका प्रयास किया है। उपन्यासकार उपन्यासमें बम्बई के जीवनसे सम्बन्धित किस्से बताते चलता है और इन किस्सों में जान फूँकने के लिए कथोपकथन का सहारा लेता है। जिससे वह घटना साक्षात

खड़ी हो जाती है और पात्रोंके असली मुखौटे भी सामने आ जाते है । एक उदाहरण देखिए --

> बी.डी.मुस्कुराया । बोला " मैने सैकण्ड हैंड जिन्दगी का धन्दा शुरू किया है ।"
>
> " फिल्म बना रहे हो क्या ?
>
> " सोचता हूँ कि फिल्म बनाऊँगा । मैं भिखारियोंकी एक वर्कशाप चला रहा हूँ ।"
>
> अलीअमजद को यकीन नहीं आया ।
>
> " दो हजार रुपये महीना दूँगा ।" बी.डी.ने कहा " सोचलो ।"[1]

कहीं कहींपर संवाद लम्बे हो गये है । वैसे उपन्यासमें संवाद कमही है । लेकिन जो है वे चुस्त और रोचक है । कथा कहनेका अधिक भार लेखकनेही स्वयं उठाया है, जिसके कारण संवादोंपर सीमा का बंधन आ गया है ।

<u>भाषा और शैली --</u>

उपन्यासमें खुलकर बम्बईया हिन्दीका प्रयोग किया गया है । बम्बई में वैसे देशके सभी प्रांतोंसे आये हुये लोग रहते है । फिल्मी दुनियामें भी यही हालत है । उपन्यासमें भोलानाथ और रमा पंजाबी है । मनसंदानी सिंधी है । अलीअमजद उत्तर प्रदेश का है । रामनाथ कानपुर का है । सभी की हिन्दी भाषामें अपनी मातृभाषाका पुट दिखाई देता है । लेखकने अपने ब्यौरे खड़ीबोली हिन्दी में दिये है। उर्दूका प्रभाव स्पष्ट रूपसे परिलक्षित होता है । पात्र अलग अलग समाजके होनेके कारण शब्दोंकी तोड़ मरोड़ बहुत हुई है । कहीं कहीं पर लेखक का कविमन भी जागृत हुआ है । जिसकेकारण प्रसंगों को अर्थवत्ता प्राप्त हो गई है । राही की भाषामें प्रवाह और रोचकता है । कुछ अपरिचित उर्दू

---

1. सीन-७५ - राही मासूम रजा - पृ.सं.१०२ ।

शब्दोंमें सामान्य पाठक को जरूर कठिनाई हो सकती है । भाषा पात्रोंके अनुकूल है । अलीअमजद, अलीमुल्लाह और हरीश के बोलनेमें अंग्रेजी शब्द भी बहुत आये हैं ।

शैली --

लेखकने रिपोर्ताज शैलीका यहाँपर भी उपयोग किया है । लेखक आँखों देखा हाल सुनाता रहता है और एक एक चित्र स्पष्ट हो जाते हैं । बीच बिचमें-टिचमें अली अमजद स्वयंही अपने जीवनके पूर्वानुभव कथन करने लगता है । कुछ पात्रोंके आत्म कथनभी गुंथे हुये हैं, जो उनकी मानसिक द्वन्द्वावस्थाको चित्रित करते हैं । उपन्यास बम्बई के फिल्मी जीवनपर आधारित होने के कारण उस वातावरणके सभी अच्छे बुरे प्रसंग यहाँ चित्रित किये गये हैं । वैसे अश्लीलके नामपर इस उपन्यासमें कुछभी प्रसंग नहीं है । लेखक की उपन्यासमें घुसकर आनेकी प्रवृत्ति इस उपन्यासमें भी एक जगह दिखाई देती है । प्रसंगोंका चित्रण करनेमें खुलापन है । कोई चीज पर्दे के पीछे नहीं रह गई है । लेखकने यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाकर बम्बई के जीवनकी कठोर वास्तविकता सामने रखी है ।

शिल्प --

शिल्प की दृष्टिसे यह एक लघु उपन्यासही कहा जायेगा । उपन्यासमें केवल दोही अध्याय हैं । अंतिम अध्याय " फेड आऊट " जो कि अलीअमजद की मृत्युके बादका हाल सुनाता है, अलग रखा है । उपन्यास के प्रमुख पात्र अलीअमजद के कथनों में कुछदो जगहोंपर तालमेल नहीं रहा है । कभी वह मुरलीगांवके फ्लैट होता है तो कभी उसके बाद अपने दोस्तोंके साथ डिक्रूज गेस्ट हाऊस के एक कमरेमें । अंतिम समय वह निश्चित रूपसे कौनसी अवस्थामें था उसका पता लगाना कठिन हो गया है । अलीमुल्लाह और बी.डी.के चले जानेतक तो वह डिक्रूज गेस्ट हाऊसपर था लेकिन उसके बाद वह एकदमसे फ्लैट में कैसे उडकर चला गया ।

भोलानाथ तक कौनसे समय उसके पड़ोसी थे इसका अन्दाजा लगाना कठिन है।

उद्देश्य --

लेखक का उद्देश्य हिन्दी फिल्म जगके वास्तविक स्वरूप को पाठकोंके सामने रखना है। बम्बईका हिन्दी फिल्म जगत दूरसे तो बहुत लुभावना लगता है, लेकिन वास्तविकता इसके विपरीत है। यहाँ के लोगोंको आधुनिक, भौतिकता, पाश्चात्य जीवनका प्रभाव, स्वार्थान्धता, नैतिक मूल्योंके प्रति उपेक्षा, व्यावसायिकता आदि बातोंने जकड़ रखा है कि, कोई भी इससे छूटा नहीं है। सभीके चेहरे एक ही लगते हैं। सामाजिकदायित्व, अपनत्व और प्रेम के उच्च आदर्श तो यहाँ देखने को भी नहीं मिलते। यदि कोई अतिसम्पन्न निष्ठ भी आये तो उसे या तो परिस्थितिसे समझौता करना पड़ता है अथवा आत्महत्या करनी पड़ती है।

लेखक इन सभी बातोंको प्रभावशाली ढंगसे चित्रित करने में सफल हुआ है।

निष्कर्ष --

राहीजीने अपने प्रत्येक उपन्यासमें अपने भोगे हुये यथार्थ को वाणी दी है। बम्बई के फिल्म उद्योग में रहकर उन्होंने इस जीवन का जो अनुभव लिया है, उन्हें प्रत्यक्ष रूपसे जो देखनेको मिला है उसे उन्होंने साहित्यिक जामा पहनाकर ईमानदारीसे साथ पाठक के सामने उपस्थित किया है। लेखक की किस्सागोई शैलीके कारण उपन्यास रोचक बन गया है। बम्बई महानगर का बहुरंगी चित्र लेखकने प्रस्तुत किया है, जो पाठक पर अविस्मरणीय छाप छोड़ जाता है।

(५) कटरा बी आर्ज़ू --

डॉ. राही मासूम रजा का सन १९७८ में प्रकाशित " कटरा बी आर्ज़ू " उपन्यास आपातकाल की घिनौनी घटनाओं और प्रभावोंपर आधारित है। आपातकाल की घटनाओं और प्रभावों को दर्शाने के लिए लेखकने इलाहाबाद का एक छोटासा मोहल्ला " कटरा मीर बुलाकी " उर्फ " कटरा बी आर्ज़ू " को चुना है। लेखक इस मोहल्ले के अनेक सामान्य लोगोंके सुख-दुःख,जीवन,उनके और बिखरते स्वप्नोंका चित्रण करते हुये उसे आपातकालसे गुजारता है और आपातकाल की भयानक विसंगतियों और राजनीतिक छल छद्मोंका उद्घाटन करता है।

कथानक --

" कटरा बी आर्ज़ू " का पहला नाम " कटरा मीर बुलाकी " था और वह परम्परासे चला आ रहा था। "कटराबी आर्ज़ू " एक कविका दिया हुआ नाम है। कवि बद्दूलहसन का शम्सूमियाँ की बेटी शहनाजसे विवाह निश्चित होता है और उसी दिन " बद्दूलहसन " कटरा मीर बुलाकी " इस नामके बोर्ड के नीचे " कटरा बी आर्ज़ू " चाकूसे लिख देता है। यह नाम आशाराम नाम के पत्रकार को बहुत पसंद आता है। आशाराम एक प्रगतिशील विचारोंका पत्रकार है। वह सम्पादक की अनुमतिसे इस विषयपर धारावाहिक लेख लिखता है, और इसी लेखके कारण तूफान खड़ा हो जाता है। पुलिस यह समझती है कि यह सरकारका तख्ता पलटनेकीही साजिशका एक अंग है। परिणामत: के.जी.ए.के नामसे एक फाईल खोल दी जाती है। फाईल नीचेसे दिल्लीतक चली जाती है और आपातकालमें आशाराम को पकड़ने के लिए एड़ी चोटी का पसीना एक किया जाता है।

"आर्ज़ू " केवल शहनाज और बद्दूलहसन की नहीं है। यहाँ के कटरेवालों के पास और तो कुछ नहीं है लेकिन आर्जुएँ बहुत हैं। इस कटरेका रहनेवाला हर आदमी कुछ न कुछ आर्जुए अपने सीनेमें छिपाये हुये है, और उसे पूरा करनेमें

जिन्दगीमे झूल रहा है।

सामान्य लोगोंकी आशुएं कभी पूरी नहीं होती बल्कि जीवन के उतार चढ़ाव तक आते आते थक जाती है, मनके किसी तहमें गाड़दी जाती है, या किसी के द्वारा तोड़ दी जाती है। इस उपन्यास के प्रमुख पात्र देश, बिल्लो, भोंदू पहलवान, शम्भू मियाँ, हलवाईबाबा, आशाराम, शहनाज, महनाज, प्रेमानारायण, मास्टर अद्दुल हसन इन सभी की कुछ न कुछ आशुएं हैं। लेखकने इन पात्रों द्वारा उपन्यास का ताना बाना बुना है। इस उपन्यास की कथा इमरजेंसी के पहले की पृष्ठ भूमि में शुरू होती है और जनता पार्टी के उदयतक आकर समाप्त होती है। भोंदू पहलवान की चाय की दूकान है। बिल्लो उनकी विधवा बहन की लड़की है और देश उनके आत्मीय दोस्त परतकुमार का पुत्र है, जिसके माता पिता बलवेमें मारे गये हैं। तबसे भोंदूपहलवान ने देश और बिल्लोका लालनपालन किया है। देश और बिल्लो दोनों एक दूसरे को चाहते है। लेकिन बिल्लो की जिद है कि जबतक वह अपना घर नहीं बनाता वह शादी नहीं करेगी। बिल्लोने अपनी एक लॉन्ड्री खोल रखी है और देश बाबू गौरी शंकर पांडेय एम.पी. के मोटर गैरेज में नौकर है। दोनों अपनी अपनी कमाईका पैसा पोस्ट के बचत खातेमें जमा करते हैं, ताकि जल्दीसे जल्दी मकान के लिए जमीन खरीदी जाए और उसपर मकान बने।

देश जिस गैरेज में काम करता है, उसी गैरेजमें शम्भू मियाँ भी काम करते हैं। शम्भूमियाँ देश को पुत्रवत प्रेम देते हैं। उनके लिए उनका एक मात्र पुत्र अब्दुल हक जोकि पाकिस्तान गया हुआ है, और देशमें कोई अंतर नहीं है। महनाज और शहनाज शम्भूमियाँ की पुत्रियाँ हैं। महनाज विधवा है और अपने दोनों बच्चोंके साथ पिताके घर रह रही है। शहनाज का विवाह मास्टर अद्दुल हसन से निश्चित हुआ है, लेकिन अद्दुल हसन के पास प्रीतिभोज देनेकेलिए पैसा नहीं है। इसी लिए शादी रुकी हुई है। शम्भूमियाँ महीनेमें कई रोजे रखकर इनको दो समय का भोजन मयस्सर कर रहे हैं। महनाज की दूसरी शादी भी पक्की हुई थी लेकिन उसका होनेवाला पति मीसा में बन्द कराये जाने के कारण वह भी नहीं हो पा रही है।

बाबू गौरीशंकर के नेशनल गैरेज में आशाराम के नेतृत्वमें पहली हड़ताल होती है, लेकिन जल्दीही वह टूट जाती है। बाबूजी यह नहीं चाहते कि मजदूर आन्दोलन कम्युनिस्टों के हाथों में जाये। इसलिए वे शम्मूमियाँ और देशको भोजन के लिए घरपर बुलाते हैं और उनके सामने वेतन बढ़ाने का प्रस्ताव रखते हैं। देश बाबूजीकी चाल पहचानता है और प्रस्ताव को ठुकरा देता है। लेकिन शम्मूमियाँ ,शिबोके कारण पैसेकी लालचमें आजाते हैं। यहींपर शम्मूमियाँ और देशमें मनमुटाव होता है। देश को नौकरीसे निकाल दिया जाता है।

इधर इंदिरागांधी इलाहाबाद चुनाव केस हार जाती है। वह देश में इमरजेंसी लागू कर देती है। यहींपर उपन्यास एक नया मोड़ लेता है। देश और बिल्लोकी शादी हो गई है। उन्होंने अपना नया घर बनवाया है। देशको गैरेज खोलने के लिए बैंक से कर्जा मिल गया है। उसका और बिल्लोका धन्दा जोरोंमें चल रहा है। दोनोंभी इंदिरा गांधी और इमरजेंसी की तारीफ करते हैं। महनाज की शादी शम्मूमियाँसे थोड़ेही छोटे और सभी तरहसे कुम्प जोड़नसे होती है। शादीमें शम्मूमियाँ देश को बुलाते नहीं। जिसके कारण देश का दिल बहुत दुःखी होता है। शम्मूमियाँ का कहना है कि " जो आज अब्दुलहक होते तो क्या हम उनके उधवाके नेवेद भेजते।"[1] और देश का कहना था " जो अब्दुल हक होते तो क्या शम्मूमियाँ अब्दुलहकसे राय किये बिना महनाज का रिश्ता तय करते।"[2] दिल दोनों के दुखे हुये थे, जाहीर नहीं कर पा रहे थे। देश को अपनी बहन की शादीमें शरीफ नहोनेका बड़ा दुख हुआ है, ~~जिस बहन की शादीमें शरीफ न होने का बड़ा दुख हुआ है~~, जिस बहन का दहेज चुकाने के लिए बिल्लो और देशने एक दूसरेसे पैसे चुराकर रेडिओ और घड़ी खरीदी थी।

पुलिस को यह मालूम था कि देश आशाराम का आत्मीय दोस्त है। देश, बिल्लो,शम्मूमियाँ और पहलवानको इमरजेंसी के बारेमें अपनी राय देने के

---

१. कटरा बी आर्जू - पृ.सं.७७।

२. कटरा बी आर्जू - पृ.सं.७७।

लिए रेडिओ स्टेशनपर बुलाया जाता है। पुलिस वहाँसे देशको भगाकर ले जाती है। उससे आशाराम का बारबार पता पूछा जाता है, लेकिन देश पुलिसकी नारकीय यातनाएँ भोगता है। उसके पैर निकामे किये जाते हैं। हाथ की उंगलियाँ बेकार की जाती हैं लेकिन देश आशाराम का पता नहीं बताता। पुलिस निराश होकर देशको बेहोश अवस्थामें उसके दरवाजेपर फेंककर चली जाती है। देश पागल और गूंगा बन जाता है। वह केवल एकही वाक्य जोर जोरसे पुकारता है " इन्द्रा गांधी की जय "।

देशके अचानक गायब हो जानेसे बिल्लो परेशान हो जाती है। ऐसे में ही वह एक कन्या को जन्म देती है। शहनाज, मोलूपहलवान और हलवारीबाबा बिल्लोकी देखभाल करते हैं। देश को इस अवस्थामें देखकर बिल्लो और पहलवान पूरीतरह टूट जाते हैं। ऐसेमेंही संजय गांधी के आगमन के सिलसिलेमें नगरनिगम द्वारा रास्ता चौड़ा करनेका काम हाथमें लिया जाता है और बिल्लोको अपना घर छोडकर संजयनगर जाने के लिए कहा जाता है। बिल्लो नगरनिगम की नोटिस किसी को नहीं बताती। एक दिन जब कि पहलवान देशका इलाज करवाने के लिए बाहर चले गये हैं, नगरनिगम का बुल्डोजर बिल्लो के घर को साफ कर देता है। बिल्लो अपने छोटे बच्चे के साथ बुल्डोजर के सामने आत्मसमर्पण करती है।

इमरजेंसीमें बद्रुल हसन की कुंवारेपनमेंही जबरदस्ती नसबन्दी की जाती है। प्रेमानारायण जो कि आशाराम की प्रेमिका है, उसपर अनेक बार बलात्कार किये जाते हैं, और उसे जेलमें ठूंस दिया जाता है। आशाराम पुलिसके हवाले होता है और इंदिरा और इमरजेंसी के गुन गाने लगता है।

कुछही महीनों के बाद इमरजेंसी खत्म हो जाती है। चुनाव का ऐलान किया जाता है। गौरीशंकर पांडे हवा का रुख देखकर पार्टी बदलकर जनता के टिकटपर खड़े हो जाते हैं। आशाराम इंदिरा गांधीके टिकट पर पांडेजीके विरोधमें खड़ा होता है। गौरीशंकर चुनाव जीत जाते हैं। चुनाव जीतनेके उपलक्ष्य में जुलूस निकलता है। देश उस जुलूसके सामने अपनी बैसाखी छोड़कर

भागनेकी कोशिश करता है और ट्रकके नीचे आकर अपनी जान गँवाता है । वही वह जगह होती है जहाँ उसका अपना घर था और वहाँपर बिल्लोने अपना प्राणार्पण किया था । उपन्यास यहीं समाप्त होता है ।

उपन्यास की कथा आपात्कालीन घटना और प्रभावोंको लेकर चलती है । कथा इलाहाबाद के एक कटरे की होते हुये भी पूरे देशकी कहानी है । लेखकने आपात्कालकी घटनाओं और प्रभावोंको दर्शाने के लिए इलाहाबादका एक छोटासा मोहल्ला " कटरा मीर बुलाकी " को चुना है । लेखक इस मोहल्लेके सामान्य लोगोंके सुख-दु:खोंका, बनते बिखरते स्वप्नों का चित्रण करते हुये उसे आपात्काल के दबावसे गुजारता है, और आपात्काल की भयानक विसंगतियों और राजनीतिक छल छद्मोंका उद्घाटन करता है ।

" कटरा बी आर्ज़ू " की कथा अनेक दृष्टियोंसे परिणामकारक बन गई है । कथामें यहाँ के लोगोंके जीवन के विविध पहलुओंका चित्रण किया गया है । जिसमें सामाजिक और मानवीय पहलू बड़ा महत्व रखता है । सामाजिक दृष्टिसे यह मोहल्ला बहुतही संश्लिष्ट और समृद्ध है । एक मानवीय संवेदना बराबर इन लोगोंके दिलोंमें बह रही है । यहाँ हिन्दू मुसलमान में कोई भेदभाव नहीं है । शम्सूमियाँ और पहलवान सभी मोहल्लेवालोंके लिए आदरणीय और विश्वास पात्र है । यहाँ की होली हिन्दू-मुसलमानों के लिए आनंद का त्यौहार है ।

कथा में मानवीय और सामाजिक सम्बन्धोंके साथही मैत्रीगत और पारिवारिक सम्बन्ध भी बड़े महत्वपूर्ण हैं । आशाराम देश का घनिष्ट मित्र है । अपने मित्र के लिए देश पूर्ण रूपसे तबाह होता है, फिर भी पुलिसको आशाराम का पता नहीं बताता । पहलवान देश और बिल्लोका संगोपन करते हैं और उनके लिए जीवनभर शादी नहीं करते । देश और बिल्लो, तथा शहनाज और मास्टर बदरुलहसन इनमें पति-पत्नी,प्रेमी-प्रेमिका से बढ़कर एक मानवीय सम्बन्धोंका नाता है । लेखकने गरीब परिवारोंके,मैत्रीमय और मानवीय सम्बन्धोंको तीव्र संवेदना के साथ पकड़कर उपस्थित किया है ।

कथा का राजनीतिक पहलूभी महत्वपूर्ण है जो जानेअनजाने यहाँके सामाजिक और मानवीय पहलूको आक्रांत करता है, तोड़ता है, कुरूप बनाता है। कभी वैयक्तिक स्तरपर तो कभी सामूहिक स्तरपर। राजनीतिका यह दबाव आरंभमें सामान्य से होते हुये अंततक तीव्र और विशेष बन जाता है। लेखकने इमरजेंसी के पहले और बादके कुछ प्रसंगोंद्वारा इसे अधिक स्पष्ट किया है। इमरजेंसी के पहले के प्रसंग राजनीति के प्रभाव में आनेवाले उन तत्वोंका उद्घाटन करते हैं, जो हर पार्टी, हर नेता, और हर शासन का अंग बन गये हैं। ऐसे दो प्रसंग है -- एक आशाराम का और दूसरा हड़तालका। इन दोनों प्रसंगोंमें लेखकने मजदूरोंकी आशा-आकांक्षा उनकी सीधी समझ, मजबूरी, हड़तालकी असफलता आदिका सशक्त चित्र उपस्थित किया है। साथही पूंजीपति कांग्रेसी नेताओंकाभी पर्दाफाश किया है। हर राजनीतिक पार्टी अपने फायदे के लिए मजदूरोंकी असहायता का फायदा उठाती है। यहाँपर लेखकने पूंजीवादी राजसत्ताके कुरूप चेहरेको बड़े सांकेतिक ढंगसे प्रस्तुत किया है।

संक्षेपमें सामाजिक और मानवीय सम्बन्धों और मूल्योंसे संपन्न यह गरीब मोहल्ला " गरीबी हटाओ " का नारा बुलंद करनेवाली इमरजेंसी के दबावमें कैसे बिखर जाता है, इसका प्रभावी अंकन इस कथा में हुआ है।

पात्र और चरित्र चित्रण --

१) मोलू पहलवान
२) देशराज उर्फ देश
३) बिल्लो
४) शम्भू मियाँ
५) आशाराम
६) बाबू गौरीशंकर पांडे

१) <u>भोलू पहलवान --</u>

भोलू पहलवान उपन्यास का सबसे प्रमुख पात्र है । पहलवान की अपनी चाय की दूकान है । पहलवान ने देश और बिल्लोका उनके बचपनसे लालनपालन किया है । इसके लिए उसने अपनी शादी तक नहीं की है । बिल्लो और देश को वह अपनीही संतान समझता है । भोलू पहलवान का इस छोटेसे मोहल्लेमें सभी आदर करते हैं और सभी उसकी बात मानते हैं । उसने सबका विश्वास प्राप्त किया है । उसके चाय खाने पर हिन्दू-मुसलमान सबकी भीड़ लगी रहती है । उनके पास हिन्दू- और मुसलमान ऐसा भेदभाव नहीं है । शम्सूमियाँ भी उनके आत्मीय दोस्तों में एक हैं । होली हिन्दू - मुसलमानों के लिए बड़ा आनंद का त्यौहार है । एक बार किसी दूसरे मोहल्लेके एक हिन्दू ने होली के दिन किसी मुसलमानपर टिपण्णी की, तब पहलवानने उसे दो थप्पड मारे और कहा " इ कटरा मीर बुलाकी है ।" " खबरदार जो यहाँ हिन्दू-मुसलमान का चक्कर चलाया । इ सब करना है तो उधर मुट्ठया जाव या अटालेका चक्कर लगाव ।"[1] देशके अचानक रेडिओ स्टेशन से गायब होनेपर और फिर बुरी तरह से अपाहिज के रूप में उसे देखकर पहलवान अंदरही अंदर टूट जाते हैं । उनका व्यक्तित्व एक समर्पित व्यक्तिका व्यक्तित्व है ।

२) <u>देशराज उर्फ देश --</u>

देश पहलवान के दोस्त भरतकुमार का लड़का है । भरत कुमार और उनकी पत्नी बलवेमें मारे गये थे । देश के बचपनसेही उन्होंने उसका लालनपालन किया है । देश और बिल्लोमें बचपनसेही प्यार है । बचपनमेंही वे गुड़िया का खेल खेलते और भावी जीवनके सपने देखते । देश और बिल्लोने अपने स्वयंके घरका सपना पाल रखा है और उसे पूरा करनेके लिए वे दिनरात मेहनत करते रहते हैं । देश बाबू गौरी शंकर पांडे के नेशनल गैरेजमें नौकर है । वहीपर शम्सूमियाँ भी काम करते हैं ।

---

1. कटरा बी आर्जू - पृ.८१ ।

पहलवानकी तरह शम्सुन्निसाँ जैसी देशको पिता का प्रेम मिला है। देश भी उन्हें अपने पिता की जगह मानता है। शहनाज और महनाज को अपनी बहन मानता है। महनाज के दहेज के लिए बिल्लोसे चुराकर घड़ी खरीदता है। आशाराम से उसकी गहरी दोस्ती है। आशाराम के प्रगतिशील विचारोंसे वह भी प्रभावित है। वह अपनी मेहनत की कमाई खाना पसंद करता है। बाबूजीके वेतन बढानेकी लालचमें वह नहीं आता। स्वयं को बेचना वह पसंद नहीं करता। शम्सुन्निसाँ और देश में इस प्रश्न को लेकर मन मुटाव हुआ। लेकिन दोनों एक दूसरे को मिलने के लिए तरसते रहे। देश स्वभावसे सरल है। उसका दिल अंदर बाहरसे खुला हुआ है। दाँवपेंच और लागलपेट उसे मालूम नहीं है। रेडिओ स्टेशनपर वह अपने भोलेपनके कारण अपनी और आशाराम की दोस्ती की चर्चा करता है और स्वयं पुलिस के जालमें फँसता है। आशाराम उसके लिए अपनेही दिल का एक टुकड़ा है। अनेक यातनाएँ सहन करता है, लेकिन दोस्त के साथ गद्दारी नहीं करता। स्वयं टूट जाता है लेकिन आशाराम का पता नहीं बताता। उसके जीवनकी यह विडम्बना है कि वही आशाराम उसका दोस्त इंदिरा कॉंग्रेस के टिकटपर चुनाव के लिए खड़ा हो जाता है।

बिल्लो और देशका केवल पति-पत्नी का ही नाता नहीं है, उसमें एक मानवीय भावना है देशको राजनीतिसे कुछ लेनादेना नहीं है। वह कहता है -- " हमरा बिके को जी ना चाहता। देखिए आसा बाबू हम न कॉंग्रेसी है न कम्युनिस्ट, न सोशलिस्ट। हम खाली कुली देस हैं। और बिकाऊ ना हैं।"[1] देश का पूरा जीवन अपने सपनों को पूरा करनेमें लगा हुआ था। उसके सारे सपने (आर्जूएँ) इमरजेंसी के बुलडोजर के नीचे पिस जाते हैं। देश का चरित्र उपन्यासमें अद्वितीय बन पड़ा है।

---

१. कटरा बी आर्जू - पृ.सं.८८ ।

३) बिल्लो --

बिल्लो पहलवान की भांजी है । बचपनसेही जवान और स्वभावसे तेज । नाकपर मक्खी तक बैठने नहीं देती । देश और बिल्लो जैसे जन्मसेही एक दूसरेको प्यार करते हैं । बिल्लोने अपने हृदयमें अपना सुन्दर घर बनाने का सपना पाल रखा है । यह सपना उसपर इतना सवार है कि वह पूरा किये बिना वह देश के साथ शादी नहीं करती । अपने सपनोंको पूरा करने के लिए वह ढोंढ़ूरी चलाती है । कुछ पैसा पैसा पोस्ट के खातेमें जमा करती है और देश से भी पैसे पैसे का हिसाब लेती है । अपने तीखे स्वभाव के कारण वह कई बार झगड़ा मोल लेती है । उसके इस स्वभावके कारण किसी की उसकी ओर आँख उठाकर देखनेकी भी हिम्मत नहीं होती । देशपरभी वह हमेशा रोब डालती रहती है । स्वयंका घर बनाने पर ही शादी करती है । वह स्वभावसे अक्खड़ जरूर है, लेकिन मनसे गंगा की तरह साफ है । वह अपने देश को जी जानसे प्यार करती है । देश के रेडियो स्टेशनसे गायब होनेपर उसकी चिन्ता का ठिकाना नहीं रहा । देशको विकलांग अवस्थामें देखकर वह फूट फूट कर रोई, जैसे उसे यह विश्वास हो गया कि उसके सपने अब टूटने जा रहे हैं । जैसेही नगरनिगमसे घर खाली करनेके लिए नोटिस आती है उसका यह विश्वास पक्का हो जाता है । उसे अपने घरसे अपने स्वप्नके महलसे इतना प्यार है कि वह बुलडोजर के सामने आत्म समर्पण करती है, अपनेही घरमें दीवालिया हो जाती है, लेकिन अपने दिल के इस टुकड़ेसे अलग नहीं होती ।

४) शम्भू मियाँ -

शम्भूमियाँ पहलवान के दोस्त हैं । वे देशको अपनाही पुत्र मानकर चलते हैं । खुद महीनेमें कुछ रोजे रखते हैं और घरके लोगोंका पेट पालते हैं । गरीबी के कारण उन्हें मजबूर होकर बाबू साहब की बात माननी पड़ती है । यहाँसे देश और उनका रास्ता अलग अलग हो जाता है । देश और उनमें मन मुटाव होता है । दोनों एक दूसरे के लिए तड़पते हैं । जैसेही शम्भूमियाँ और देश

एक दूसरेसे मिलते हैं, दोनों फूट फूटकर रोते हैं । गरीबी के कारण एक बार भलेही उन्हें लाचार बनना पड़ा हो, लेकिन महनाज की एक कौड़ी लेना हराम समझते हैं । सबको इन्सानियत और प्रेमका झरना हमेशा उनके हृदयमें बहता रहता है ।

५) आशाराम --

आशाराम प्रगतिशील विचारोंका पत्रकार है । "कटरा बी आर्जू" नामपर गुप्त होकर धारावाहिक लेख लिखता है और पुलिस इन लेखोंको पढ़कर उसपर शक करती है । देश का वह आत्मीय मित्र है । दोनों मिलकर पहलीबार नेशनल पेपरमें हड़ताल करते हैं। उसके दादा पक्के कौंग्रेसी और गांधी भक्त हैं, लेकिन आशाराम को इन लोगोंसे बड़ा शोक है । इमरजेंसी में पहले तो डर पता होता है लेकिन फिर पुलिस के टॉर्चर से डरकर इंदिराजीकी जय बोलने लगता है । वह इमरजेंसी के समर्थनमें सभाओंमें भाषण देने लगता है । इतनाही नहीं इमरजेंसी के बाद कौंग्रेस की ओरसे खड़ा होकर हार भी जाता है । उसके चरित्रको आजके नेताओंके चरित्रके साथ जोड़ा गया है ।

६) गौरीशंकर पांडेय --

इलाहाबाद के एम.पी. है । स्वयंकी नेशनल पेपर है । मजदूर आन्दोलन अपनेही हाथमें रहे इस लिए देश और शम्भूमियाँ को पैसोंकी लालच बताकर अपना करना चाहते हैं । आधुनिक कौंग्रेसी लीडरोंके सभी गुण उनमें भी मौजूद हैं । समय देखकर टोपी फिरनेमें माहिर हैं । इमरजेंसी के उठतेही उन्हें विश्वास हो जाता है कि इंदिरा कौंग्रेस अबकी बार हारेगी । वे जनता पार्टी में शामिल हो जाते हैं और उसके टिकटपर चुनकर भी आते हैं। उपन्यासमें उनका चरित्र केवल आजके नेताओंपर प्रकाश डालने के लिए ही रखा गया है ।

इन पात्रों के अतिरिक्त शहनाज,महनाज,बद्रुलहसन,प्रेमानारायण और इतवारी चाचाके चरित्र भी उपन्यासको आगे बढ़ाने में सहायक हुये हैं । मास्टर बद्रुल हसन और शहनाज अपने प्रेम को सीनेमें छुपाकर अंतमें टूट जाते हैं क्योंकि

शादीके पहलेही इमरजेंसीमें मास्टर साहब का नसबन्दीका ऑपरेशन जबरदस्ती किया जाता है । प्रेमा नारायण आशाराम की प्रेमिका है, लेकिन इमरजेंसीमें उसपर जो ज्यादतियाँ हुई वह भयानक है । इनसबमें अलगही व्यक्तित्व का पात्र है हलवारीबाबाका । कई सालोंसे भीख मॉंगनेका काम करते आ रहें हैं और अपनी दो टूक बात के लिए प्रसिद्ध हैं । बिल्लो और देशपे उन्हें भी पुत्रवत प्रेम है ।

कथोपकथन --

कथोपकथन की दृष्टिसे यह उपन्यास बहुतही अनूठा बन पड़ा है । उपन्यास के अधिकांश पात्र सामान्य जन के प्रतिनिधि हैं । इसीलिए इन लोगोंकी बोलीमें जो मिठास है, वह कुछ और ही है । संवाद छोटेछोटे और प्रभावशाली हैं । एक उदाहरण देखिए --

" जीरो रोडका क्या लोगे ? " बिल्लोने कहा ।

" अरे मोल तोल का कर रही है ।" देश बोलने लगा ।

" ले करे दयो ।" बिल्लोने उसे रोक लिया ।

" आठ आना ।" रिक्शेवालेने कहा ।

" देहलीका किराया ना पूछ रहें ।" बिल्लोने कहा ।

" बार आना देंगे ।" [1]

और एक उदाहरण देखिए ---

पहलवान बोले -- " हमरा तो खून खौल रहा सरे शामसे ।"

" कहे बात पर ? " देश ने पूछा ।

" जोखन को स्मों ना आयी महनाज के वास्ते अपना पयाम देते "।

" इसमें खून खौलाये की का बात है ? " हलवारी ने कहा ।

" है कैसे नहीं ।" पहलवान टिक गये " जो सुनेगा थू-थू करेगा कि कटरा

---

१ कटरा बी आर्जू - पृ.सं.५७ ।

मीर हुजाकों में कैसे लोग रहते हैं ।"

" कोई ऊन्थ पून्थू ना करेगा ।" हलवारी ने कहा " आजकल हर मुहल्ले में एक आध तो जोकन और महनाज है । जिन्दगी पैसली हो गयी है पहलवान ।"[1]

इस तरह के छोटे छोटे और कसदार वाक्य उपन्यासके हर पन्नेपर देखने को मिलते हैं । लेखक ने जिन लोगोंकी जिन्दगीका चित्र प्रस्तुत किया है उनकीही भाषा का प्रयोग किया है । इनके कथोपकथनमें स्वाभाविकता, प्रवाह और जिन्दादिली है । संवाद कहींपरभी लम्बे और उबाऊ नहीं हैं । जहाँ आवश्यकताहो वहींपर लेखकने वर्णनात्मक ढंग अपनाया है । कथोपकथन उपन्यास की लय और प्रवाह को कायम रखते हुये उसे आगे बढाते हैं । राही साहब जबसे फिल्मों के लिए लिखने लगे हैं, चुटीले और प्रवाहयुक्त संवाद लिखना उनके लिए चुटका बजाने की तरह हो गया है । इन संवादोंमें प्रभावोत्पादकता और पाठकोंको पकड़कर रखने की क्षमता है ।

<u>वातावरण</u> --

उपन्यासमें चित्रित वातावरण इमरजेंसी के पहले और बाद का है । इमरजेंसीके पहले की सुहावनी अवस्था इमरजेंसीमें जैसे गायब हो जाती है । उपन्यासकारने इमरजेंसीकी पुलिस ज्यादतियों का साक्षात चित्र प्रस्तुत किया है । देशपर हुये अत्याचार, बुलडोजरसे घरोंको गिराना तथा देश की मूच्छित अवस्थामें घर के बाहर झांककर देखनेकी हिम्मत न करना, इमरजेंसीके आतंक को चित्रित करता है । साथही देश के राजकीय वातावरण को चित्रित करनेमें लेखक सफल रहा है । इमरजेंसीमें महनाज द्वारा नसबन्दीका प्रचार, मास्टरजीका जबरदस्ती नसबन्दी ऑपरेशन, नौकरशाही द्वारा किये गये अत्याचार आदिका साक्षात चित्र लेखकने प्रस्तुत किया है । बाबू गौरीशंकर पांडेय द्वारा इमरजेंसी के बाद पार्टी बदलना

---

१. कटरा बी आर्जू - पृ.सं.७१ ।

तथा आशाराम का कॉंग्रेस टिकटपर चुनाव लड़ना, ये सभी बातें उस समयकी राजकीय परिस्थितिका चित्र प्रस्तुत करती हैं। ऐसा लगता है हम एकबार फिर आपात्कालके उस घिनौने वातावरण में चले गये हैं।

भाषा और शैली --

राहीजीका भाषापर पूरा अधिकार है। जिस मोहल्लेका वर्णन उन्होंने इस उपन्यासमें किया है, वहाँ के लोगोंकी भाषा का सही उपयोग किया है। पात्र जिस समाज का है, वह वही भाषा बोलता है। भाषामें प्रवाह और प्रभावोत्पादकता है। उर्दू शब्दोंका उपयोग राहीजीके लिए नया नहीं है। पूरे उपन्यास की भाषा उर्दू और खड़ीबोली का मिश्रण है। देश, पहलवान, ब्रह्मचारीबाबा, बिल्लो सामान्य जनताकी भाषा बोलते हैं। आशाराम प्रेमनारायण, बहुत हसन पढ़े लिखे होने के कारण खड़ी बोली का प्रयोग करते हैं। अंग्रेजीशब्दोंकाभी बहुलतासे उपयोग किया गया है, लेकिन ये शब्द ऐसे है जो अब जनसामान्य में रूढ हो गये है। भाषा में बिम्बों और प्रतीकोंका उपयोग कर आपात्कालकी स्थिति का चित्र उपस्थित किया है। उपन्यासके पात्र निम्न वर्ग के होनेके कारण गालियोंका प्रयोग बहुत जगहोंपर हुआ है, लेकिन जेलमें प्रेमनारायण के साथ मायावती के सम्बन्ध, पहलवान के पादनेका और जगदम्बा प्रसाद के मूतनेका प्रसंग तथा दुकानदार का समलैंगिक मैथुनवाला प्रसंग अनावश्यक और खटकनेवाला है।

उपन्यास का बहुत बड़ा अंश रिपोर्ताज शैलीमें लिखा गया है। कथा कहनेकी राही की यह एक विशेष शैलीही बन गई है, जिसका उपयोग उन्होंने अपने प्रत्येक उपन्यासमें किया है। प्रसिद्ध समीक्षक रामदरश मिश्र इस सम्बन्धमें लिखते हैं -- " इसे रिपोर्ताज शैली कह सकते हैं। ये कथा को स्थापित करने के स्थानपर अनेक छोटे छोटे ब्यौरों को एक साथ जल्दी जल्दी कहते चलते हैं। वे ब्यौरे कुछ ठहरकर अंतरिक्षता का रस ग्रहण न कर पाने के कारण प्रायः नीरस

हो जाते हैं और पाठक कथाके प्रवाहमें बहनेके स्थानपर विवरणोंमें उलझ जाता है ।"[1] ऐसा होते हुये भी उपन्यास के आरंभ में दिखाई देनेवाली यह प्रवृत्ति आगे धीमी पड़ जाती है और कथा बन्धी चली जाती है । उपन्यास पठनीय बन जाता है।

शिल्प --

उपन्यास कुल तेरह अध्यायोंमें विभाजित है और २२४ पृष्ठों में पूरा हुआ है । हर अध्याय का नामकरण भी किया गया है । यह नामकरण लेखकने बड़ी सूझ बूझ के साथ किया है, कुछ अध्यायोंके नाम काव्यात्मक लगते हैं । जैसे "हम जमानेमें कहाँसे हैं मुहब्बत के सिवा ","मेरे पहले गैर को क्यों तेरा घर मिले ," और " हम तो ए आकुल तोरे अंगना की चिरैया " आदि । लेखकको उपन्यासमें स्वयं घुस आने की प्रवृत्ति इस उपन्यासमें भी देखने को मिलती है । ऐसा जहाँ कहीं लेखक को उपन्यास के पात्र इमरजेंसी की कुरूपता दिखानेमें असमर्थ लगे हैं, वहीं पर हुआ है । लेखक स्वयं अपने विचार व्यक्त करने लगता है । डॉ.रामदरश मिश्रके शब्दोंमें " किन्तु मुझे इस उपन्यासमें यह लेखक की व्यक्तिगत फूहड़ और अनावश्यक घुसपैठ लगती है ।"[2] लेखकने अनावश्यक रूपसे अनेक साहित्यकारों, कलाकारों और राजनीतिक नेताओं के नाम उपन्यासमें घसीटे हैं । इमरजेंसी की अमानवीय घटनाओंका उद्घाटन करने के लिए लेखकने नाटकीय स्थितियोंकी योजना की है । इस कारण लेखक प्रभाव उत्पन्न करनेमें सफल हुआ है । प्रेमनारायण और देश की दुर्दशा, बिल्लोंका का बुल्डोजर के सामने आत्मसमर्पण आदि प्रसंग अतिनाटकीय बन गये हैं ।

---

१. हिन्दी उपन्यास समकालीन परिदृश्य - सं.डॉ.महीपसिंह -
"कटरा बी आर्जू " आपात्काल सन्दर्भ की एक सार्थक रचना - ले.डॉ.--
-- रामदरश मि, पृ.सं.८८ ।

२. -- वही -- -- वही -- पृ.सं.८७ ।

उद्देश्य --

कथाकार का उद्देश्य आपात्कालकी दर्दनाक घटनाओंको प्रत्यक्ष करना है। " कटरा मीर बुलाकी " की तरह गूँगी बस्तियाँ और गूँगे लोग आज भी देशमें देखने को मिलेंगे। यहाँ उजाले का नामोनिशान नहीं है। लोग जन्मते है, अपनी आर्जूओंको पालते है उनके सुन्दर स्वप्न देखते है, और जिन्दगी योंही तमाम हो जाती है। उनके स्वप्न हृदयके अँधेरे कोनेमें पड़े रहते हैं। जवानके रहते तक या तो टूट जाते हैं अथवा तोड़े जाते है। वे कभी पूरा नहीं होते। लेखकने " कटरा मीर बुलाकी " के लोगों के माध्यमसे ऐसे हजारों लोगोंको प्रत्यक्ष किया है। इस उपन्यासमें लेखकने तत्कालीन राजनीतिको तो दर्शाया है ही साथही आज कलके तथाकथित गरीबी दूर करनेका नारा लगानेवाले लोगोंकाभी नकाब उतारा है। इसके अतिरिक्त सामान्य और गरीबलोगों के बीच दिखाई देनेवाला आपसी सौहार्द, भाई चारा, और मानवीयता को उजागर करना भी लेखक का उद्देश्य रहा हैं। लेखक अपने सभी उद्देश्योंमें पूरीतरह सफल रहा है।

निष्कर्ष --

निष्कर्ष रूपमें हम कह सकते हैं कि इस उपन्यासके द्वारा लेखकने आपात्कालीन राजनीतिका एक दस्तावेज ही बनाकर रखा है। लेखकमें वह शक्ति हैं कि वह पाठकोंको आपात्कालकी सैर करवाता है और उपन्यास के अंततक वह पाठकोंमें तत्कालीन राजनीतिके प्रति क्षोभ और पीड़ा उत्पन्न करता है।